चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र

Photo by T. S. Satyan

पुरस्कृत

चलो चलें !

प्रेषक :

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
(Rule 8 Form IV), Newspapers (Central) Rules, 1956

1.	*Place of Publication*	:	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
2.	*Periodicity of Publication*	:	MONTHLY 1st of each Calendar month
3.	*Printer's Name*	:	B. NAGI REDDI, Managing Director, The B. N. K. Press (Pvt.) Ltd.
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
4.	*Publisher's Name*	:	B. VENUGOPAL REDDI, Managing Partner, Sarada Binding Works
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
5.	*Editor's Name*	:	CHAKRAPANI (A. V. Subba Rao)
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
6.	*Name & Address of individuals who own the paper*	:	SARADA BINDING WORKS: PARTNERS, 1. Sri. B. Venugopal Reddi. 2. Smt. B. Seshamma. 3. Smt. B. Rajani Saraswathi. 4. Smt. A. Jayalakshmi. 5. Kumari. B. Sarada. 6. Sri. B. L. N. Prasad. 7. Sri. B. Viswanatha Reddi. 8. Sri. B. Venkatrama Reddi.

I, B. Venugopal Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

1st March, 1959

B. VENUGOPAL REDDI,
Signature of the Publisher

Remy
SNOW
Remy
TALCUM POWDER
Remy

हमारी रानी माँ

हमारे पड़ोस में एक छोटा सा घर है। इस में रानी माँ रहती है। जब हम अपनी छत पर खड़े होते हैं तो नीचे आँगन में रानी माँ को कभी चरखा कातते देखते हैं तो कभी स्वेटर बुनते।

एक दिन मैं ऊपर खड़ी धूप में बाल सुखा रही थी कि नज़र रानी माँ पर पड़ी। चरखा सामने धरा है लेकिन रानी माँ कात नहीं रही। मैं ने सोचा चलो दोनों मिल कर कुछ आपबीती और कुछ जगबीती की बातें करेंगे। रानी माँ के पास पहुँची तो उस ने पीढ़ी आगे खिसका कर कहा, "अब मैं इतनी भोली भी नहीं जो इस बात को सच समझ बैठूँ कि रूस ने आजकल आसमान पर नया सितारा चढ़ाया है जिस में एक कुत्ता भी बंद है"।

मैं ने रानी माँ को स्पूटनिक और लायका के बारे में कुछ बताया तो उस ने दाँतों तले उंगली दबा ली। "भगवान तुम्हारा भला करे," उस ने कहा, "अब पूरी तरह समझ आई। मैं मोटी बुद्धि की हूँ, ज़रा देर से समझती हूँ।"

यह बात तो नहीं कि रानी माँ मोटी बुद्धि की है। बच्चे जब अपना पाठ ऊँचे ऊँचे पढ़ते हैं तो उन से सवाल पूछ पूछ कर आप भी बहुत कुछ सीख गई हैं। दूसरी औरतों की तरह नहीं कि लकीर की फ़कीर बनी रहे।

अब उस दिन की बात है। मैं बाज़ार जा रही थी कि रानी माँ ने कहा, "बेटी तकलीफ़ न हो तो मेरे लिए कपड़े धोने का साबुन ले आना।" मैं अपनी आदत से मजबूर सनलाइट

साबुन ले आई। जब रानी माँ ने साबुन देखा तो खिलखिला कर हँस पड़ीं। कहने लगीं, "बेटी, हमारे घर में कौन रेशमी कपड़े पहनता है जो तुम इतना मँहगा साबुन उठा लाई!"

"लेकिन रानी माँ, हम तो अपने घर के सभी कपड़े सनलाइट ही से धोते हैं।" रानी माँ कुछ देर चुप रहीं। फिर बोलीं, "बेटी तुम तो जानती हो हम लोगों की हालत, अब हम में इतनी ताक़त कहाँ जो ऐसे क़ीमती साबुन से कपड़े धोवें।"

मैं रानी माँ की तसल्ली करती कि घर से बुलावा आ गया। मैं बाद को आने का कह कर चली आई, मगर काम में ऐसी उलझी कि फ़ुरसत न मिली।

दोपहर ढले दरवाज़े पर खटखट की आवाज़ सुनी। दरवाज़ा खोला तो सामने रानी माँ खड़ी थीं। मुझे देखते ही मेरी बलायें लेने लगीं, "भगवान तुम्हारा भला करे, यह साबुन तो कमाल का है। ज़रा आ कर देखो तो सही!"

मैं ने देखा तो रानी माँ के आँगन में साफ़ सफ़ेद उजले कपड़ों की क़तारें किसी दुलहन की बरात नज़र आती थीं। रानी माँ ने मेरे कान में कहा, "इतने कपड़े धो डाले फिर भी साबुन कुछ बाक़ी पड़ा है... इस हिसाब से तो मैं कहूँगी कि यह साबुन कोई मँहगा नहीं, बिलकुल मँहगा नहीं, बल्कि सस्ता है।"

रानी माँ ने बैठते हुये पूछा, "एक बात बताओ बेटी, यह तो मैं ने सुन रखा था कि सनलाइट से कपड़े धोते वक़्त पीटने पटकने की कोई ज़रूरत नहीं। इस लिए मैं ने सारे कपड़े इस के झाग में ही मल मल के धो लिए .. बड़े साफ़ और उजले धुले हैं ... हाँ तो मैं यह जानना चाहती थी कि सनलाइट में ऐसी कौन सी बात है कि जो यह इतने काम का साबुन है?"

मैं ने कहा, "रानी माँ सनलाइट एक बिलकुल शुद्ध साबुन है, जिस के कारण यह बहुत भरपूर झाग देता है, और वह भी ऐसा जो कपड़े के ताने बाने में छिपा मैल बाहर निकाल लावे।"

"ओह! अब समझी क्यों इस से कपड़े इतने साफ़, उजले और जल्दी धुल जाते हैं और इन में से स्वच्छता की महक भी आती है।"

थोड़ी देर चुप रह कर बोलीं, "अच्छा अब क्या बातें करें! अब तो मेरे पास फ़ुरसत ही फ़ुरसत है।"

S. 2618-50 HI

हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड से बनाया

एक पंथ-दो काज

माप-तोल की मेट्रिक प्रणाली लागू हो जाने से हमें दो महत्वपूर्ण लाभ होंगे। प्रथम तो हमारे देश में अनेक प्रचलित प्रणालियों के कारण जो गड़बड़ी और नुकसान होते हैं, वे रुक जायेंगे।

इसके साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सुचारु रूप से चल रही प्रणाली को हम पूर्णतया अपनाने में समर्थ हो सकेंगे। मेट्रिक प्रणाली को सारे विश्व में मान्यता प्राप्त है।

इन दोनों लाभों को प्राप्त करने की दिशा में हमने पहला कदम कुछ राज्यों और उद्योगों के चुने हुए क्षेत्रों में मेट्रिक बाट लागू करके उठाया है।

सरलता
व
एकरूपता
के लिए

डी०ए० ५८/४२१

भारत सरकार द्वारा प्रसारित

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

अब कई शिक्षणालयों में अवकाश प्रारम्भ होगया होगा। भारत में हजारों शिक्षणालय हैं, सैकड़ों तरह के हैं। कई शिक्षणालय सरकार द्वारा चलाये जाते हैं, कई मिशनरियों द्वारा, कई जिला बोर्ड द्वारा। परन्तु इन सब में अवकाश काल एक समय नहीं होता। ऋतुओं के कारण शायद यह सम्भव भी नहीं।

न सब शिक्षणालयों अवकाश की अवधि ही एक है। कई में यदि तीन महीने की छुट्टियाँ हैं, तो कई में पूरे डेढ़ महीने की भी नहीं।

शिक्षा और शिक्षणालयों की गतिविधि, नियम-क्रम के बारे में, एकरूपता यदि वांछनीय है, तो इस सम्बन्ध में आवश्यक जांच पड़ताल करनी होगी।

वर्ष : १०   अप्रेल १९५९   अंक : ८

Ranga

कृष्ण के पाण्डवों के पास वापिस चले जाने के बाद, दुर्योधन ने, कर्ण, शकुनि और दुश्शासन को बुलवाकर विचार-विमर्श किया।

"कृष्ण सन्धि के लिए आया था, पर अपने काम में असफल होकर लौट गया। वह जाकर पाण्डवों को खूब उकसायेगा। जो वह कहेगा, अर्जुन और भीम करेंगे। युधिष्टिर उनके विरुद्ध कुछ न करेगा। पाण्डवों की तरफ़ से लड़नेवाले विराट और द्रुपद तो मेरे शत्रु पहिले से ही हैं। पाण्डवों के सेनापतियों में वे मुख्य हैं। इसलिये युद्ध होकर रहेगा। हमें आनाकानी करने की ज़रूरत नहीं है। तुरत तैयारियाँ शुरु हो जानी चाहिये। कुरुक्षेत्र में हम सब के लिए तम्बू लगवाओ। उनके निर्माण के लिए उचित स्थल देखो। वह स्थल आसानी शत्रुओं की पहुँच में न हो। लकड़ी और जल की भी वहाँ सुविधा हो। शिविर तक आहार पहुँचानेवाले मार्ग सुरक्षित करने की व्यवस्था करो, ताकि शत्रु उन्हें न रोक सकें। शिविर में अस्त्र-शस्त्र भी खूब पहुँचाओ। हस्तिनापुर से शिविर तक अच्छा मार्ग तैयार करवाओ। घोषणा करवाओ कि कल ही सेना कुरुक्षेत्र की ओर कूच करे। कोई गल्ती न हो।"—दुर्योधन ने अपने आदमियों को आदेश दिया।

शकुनि, कर्ण और दुश्शासन ने तुरत युद्ध की तैयारियाँ प्रारम्भ कर दीं। कुरुक्षेत्र में दुर्योधन की ओर से लड़ने वाले राजाओं के लिए हजारों तम्बू गाड़ दिये गये। सब व्यवस्था की गई।

इधर हस्तिनापुर में कुहराम मचा हुआ था। दुर्योधन का आदेश सुनते ही, राजा लोग युद्ध की पोषाक पहिनने लगे।

पगड़ियाँ वगैरह बाँधने लगे। सारथी रथों को, साईस घोड़ों को, महावत हाथियों को तैयार करने लगे। पदाति चमचमाते कवच पहिनकर, ढाल तलवार लेकर युद्ध केलिए तैयार हो गये। नगर को देखकर लगता था, जैसे कोई उत्सव हो रहा हो। जहाँ कहीं नजर जाती, वहीं लोग, घोड़े, हाथी, रथ दीख पड़ते थे। शोर शराबा हो रहा था। ढोल पीटे जा रहे थे। उत्साह दिखाया जा रहा था।

उस दिन, युधिष्टिर अपने शिबिर में, आनेवाले कुलसंहार के बारे में चिन्तित हो रहा था। उसने जाकर कृष्ण से पूछा—"हमारी माँ, कुन्तीदेवी युद्ध करने के लिए कह रही हैं। मगर आपका क्या विचार है? आपकी क्या राय है?"

कृष्ण ने कहा—"युद्ध हम कोई अपनी मर्ज़ी से नहीं कर रहे हैं। मैंने दुर्योधन को वह सब कहा, जो कहा जा सकता था। विदुर ने भी उसे समझाया। भीष्म और द्रोण भी उसका विचार न बदल पाये। शकुनि और कर्ण ने उसको उकसा रखा है। इसलिये यह कुल संहार करनेवाला युद्ध हम पर आ पड़ा है। हम अब कुछ

नहीं कर सकते। बिना राज्य लिये तो हम सन्धि न कर सकेंगे। उस हालत में युद्ध कैसे रोका जा सकता है!" कृष्ण ने कहा।

अर्जुन ने भी कृष्ण का समर्थन कर युधिष्ठिर को युद्ध के लिए प्रोत्साहित किया। रात बीत गई। अगले दिन दुर्योधन ने अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेना को उत्तम, मध्यम, दुर्बल, तीन भागों में—विभक्त किया। यह तय किया गया कि उत्तम भाग सबके सामने आगे रहे, उसके बाद, बीच में मध्यम, पीछे दुर्बल, रहें ताकि युद्ध का निर्वहण अच्छी तरह हो सके।

युद्ध में अगर कोई रथ टूटकर गिर जाय, तो उसकी मरम्मत करने के लिए, आवश्यक उपकरण रथों में रखे गये। तरकशों में बाण, और अस्त्र, शस्त्र, जल, झंडे वगैरह, भी रखे गये।

सारथियों के पास कवच होते हैं। मगर उनमें शूर वीर और शस्त्रों को पहिचान ने की शक्ति होनी चाहिये। ऐसे लोगों को ही सारथी नियुक्त किया जाता था। एक एक रथ में चार चार अच्छे घोड़े जोते

गये। एक एक रथ के साथ सात सात योद्धा थे। एक, रथ के पीछे वाले सामान वाले घोड़े पर सवार होता था, दो सारथी होते थे। दो युद्ध करते। अलावा इनके, एक रथी और एक अश्वनिपुण भी होता था।

हाथियों को भी अलंकृत किया गया। रथों की तरह हाथियों के साथ भी सात सात आदमी होते थे। उनमें दो अंकुश लिये महावत। दो बाणों से युद्ध करनेवाले, दो तलवार से लड़नेवाले, त्रिशूल, आदि लिये एक, ये सब हाथी पर ही सवार होते थे। एक एक अश्वदल के साथ हजार बलवान योद्धा होते थे।

सम्पूर्ण सेना की यूं व्यवस्था की जाती थी। एक एक रथ के साथ दस दस गज योद्धा। एक एक गज के साथ दस दस घोड़े और एक एक घोड़े के साथ दस दस पदाति।

दुर्योधन ने अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेना का इस प्रकार विभाजन किया, उसने उनके लिए ग्यारह सेनापतियों को नियुक्त किया। वे थे, कृपा, द्रोण, शल्य, सैन्धव, सुदक्षि, कृतवर्मा, अश्वत्थामा। भूरिश्रवस, कर्ण, शकुनि, बाह्लिक।

इसके बाद, दुर्योधन ने सब राजाओं के समक्ष, भीष्म की ओर मुड़कर, नमस्कार करके कहा—"महात्मा! चाहे सेना समुद्र के समान बड़ी हो, मगर यदि उसका ठीक नायक न हो तो वह बाम्बी की तरह दह जाती है। हो सकता है कि सेनापतियों में आपस में झगड़ा हो, यह भी सम्भव है कि उनमें सदा एकमत न रहे। इसलिये आवश्यक है कि सब बातों में समर्थ, सेनापतियों का एक सेनापति हो। युद्ध में विजय पाने के लिए यह पहिली सीढ़ी है।

आप बहुत बड़े नीतिवान हो, हमारे हितैषी हो, अजेय हो, धर्म के पथ से विचलित होनेवाले नहीं हो। इसलिये मेरा नम्र निवेदन है की आप इस सेना के उच्चतम सेनापति हों, आप वृषभ राज की तरह आगे चलिये, और हम गौवों के झुण्ड की तरह आपके पीछे पीछे चलेंगे। यही मैं आप से बार बार प्रार्थना करूँगा।"

तब भीष्म ने कहा—"बेटा, जो तुमने कहा है, उसमें सच न हो, ऐसी बात नहीं है। पाण्डवों में, सिवाय अर्जुन के, मेरा मुकाबला करनेवाला कोई नहीं है, उसके पास बहुत-से दिव्य अस्त्र हैं। उसने अभी तक मुझ से आमने सामने कभी युद्ध नहीं किया है। अगर हम दोनों एक दूसरे के सामने होकर लड़ें और दिव्यास्त्रों का उपयोग करें तो यह संसार निर्जन हो जायेगा। कुछ न बचेगा। सब नष्ट हो जायेगा। परन्तु मेरेलिये जैसे तुम हो वैसे पाण्डव भी हैं। मैं उनको अपने आप नहीं मारूँगा।" दुर्योधन आदि उनकी ओर आश्चर्यपूर्वक देखने लगे, और योद्धाओं के बारे में पूछते हो!

मैं उनको लाखों की तादाद में मार दूँगा। एक और बात भी है। मैं नहीं चाहता कि कर्ण और मैं मिलकर युद्ध करें—क्यों कि उसको मुझ से कुछ द्वेष है। मैं या तो उसके बाद युद्ध करूँगा, नहीं तो पहिले "अगर तुम ये दोनों शर्तें मानो तो मुझे उच्चतम सेनापति होने में कोई आपत्ति नहीं है।" भीष्म ने हाथ हिलाते हुए कहा।

यह सुन कर्ण ने कहा—"पहिले आप ही युद्ध कीजिये। आपके बाद ही मैं युद्ध में उतरूंगा। आप जैसा चाहेंगे वैसा ही करूँगा।"

इसके बाद, दुर्योधन ने ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर, भीष्म को उच्चतम सेनापति नियुक्त किया। भेरी, ढोल, नगाड़े, आदि बजाये गये। सिंह और हाथियों ने हुँकार कर इसका अभिनन्दन किया। शंख बजाये गये। उनकी सेना में सर्वत्र इसका स्वागत किया गया।

इसके बाद, दुर्योधन अपने भाइयों और भीष्म आदि राजाओं को लेकर कुरुक्षेत्र की ओर धूम-धाम से निकला। कुरुक्षेत्र में उनके तम्बुओं को देखकर लगता था, जैसे वहाँ हस्तिनापुर ही आकर बसा हो। बड़ी चहल पहल थी।

कौरव और पाण्डव में युद्ध होता देख, बलराम, अक्रूर, साम्ब, गदा, आदि को लेकर युधिष्टिर के पास आया। उसने उससे कहा—"हमारेलिये कौरव और पाण्डव बराबर हैं। मैंने कृष्ण से भी कहा कि वह तुम दोनों की समान रूप से सहायता करें। परन्तु उसने उनसे पक्षपात किया, मैं कौरवों का नाश नहीं देख सकता। मैं तीर्थ यात्रा पर जा रहा हूँ।" यह कहकर वह चला गया।

[९]

[चन्द्रवर्मा कपालिनी से विदा लेकर उत्तर दिशा की ओर निकला। उसे रास्ता दिखाता कालसर्प आगे-आगे चला। एक नाले के किनारे, चन्द्रवर्मा को एक अजीब वृक्ष दिखाई दिया। उस पर लटके एक फल को तोड़कर जब उसने खाया, तो वह पशु-पक्षियों की भाषा समझने लगा। थोड़ी दूर जाने पर, उसे गरम पानी की एक नदी दिखाई दी। उसी समय एक महासर्प उसे पार कर रहा था। चन्द्रवर्मा उसकी पीठ पर से भागकर परले पार पहुँच गया। बाद में....]

चन्द्रवर्मा जब साँप पर से भागता-भागता नाले के बीच में पहुँचा तो नाले की भाप ने उसे मूर्छित-सा कर दिया। उसे यह भी सन्देह हुआ कि कहीं उसके कपड़े जल तो नहीं रहे थे। लहरें जब उठीं, तो उसपर गरम पानी की बौछार हुई। चन्द्रवर्मा लड़खड़ाया। डर लगा कि कहीं वह पानी में न गिर जाय। परन्तु इतने भय और जल्दबाजी के बावजूद वह आगे भागा जा रहा था। उसकी नज़र, सामने भागनेवाले बन्दरों पर ही गड़ी थी। थोड़ी देर में उसे किनारा दिखाई दिया। चन्द्रवर्मा ने साँप पर से एक छलांग मारी। वह सिर पर पैर रखकर पेड़ों की ओर भागने लगा।

वह जान गया कि अगर उसकी नज़र उस पर पड़ी तो उसका जीते जी रहना असम्भव था। शंख तक भला क्या जा पाता। परन्तु सौभाग्य से उस सर्प ने अपना सिर चन्द्रवर्मा की ओर न मोड़ा।

थोड़ी देर में उसका मुख पेड़ों में जा छुपा। धड़ धीमे-धीमे आगे सरक रहा था।

जब उसे मालूम हो गया कि सर्प की दृष्टि उसपर नहीं पड़ सकती थी तो उसने उसके ताड़ के समान शरीर को गौर से देखा। उसका शरीर इस तरह चमक रहा था, जैसे उसपर तेल पोता गया हो। उसकी खाल ऐसी थी मानों कवच पहिन रखा हो। अगर वह उसे तलवार से मारता तो तलवार ही टूटती, उस साँप की खाल भी न उखड़ती, यह चन्द्रवर्मा जान गया।

परन्तु फिर भी उसने उसके शरीर में तलवार घुमेड़ कर देखना चाहा। चन्द्रवर्मा ने अपनी तलवार निकालकर जोर से उस पर मारी। खड़ाक, आवाज़ हुई। साँप हिला भी नहीं। वह चलता जाता था। सर्प को शायद ऐसा भी न लगा, जैसे उसपर चोट की गई हो।

यह दो चार क्षण का विचित्र अनुभव था। और चन्द्रवर्मा पसीना पसीना हो गया था। वह हाँफता, पसीना पोंछता एक तने के सहारे खड़े होकर उस महासर्प की ओर देखने लगा। वह अभी नदी पार कर रहा था।

उसे, न उस की पीठपर भागकर आनेवाले बन्दरों के बारे में मालूम था, न चन्द्रवर्मा के बारे में ही। दस-पन्द्रह फीटवाला उसका काला मुँह, थोड़ी दूर पर, पेड़ों में चन्द्रवर्मा को दिखाई दिया। अंगारे जैसी उसकी आँखों को देखकर चन्द्रवर्मा सिहर उठा।

चन्द्रवर्मा ने आश्चर्य से चारों तरफ़ देखा। फलों से लदे वृक्षों को देखते ही उसको अपनी भूख याद हो आई। वह तलवार रखकर, पासवाले पेड़ के पास गया। एक आम काटकर वह मुख में रखनेवाला था कि उसे हाथी का हुंकार सुनाई दिया। चन्द्रवर्मा ने यकायक सिर उठाकर उस तरफ़ देखा, जिस तरफ़ से यह आवाज़ आ रही थी।

उसे कहीं हाथी न दिखाई दिया। परन्तु थोड़ी दूर पर तेज़ हवा के कारण. पेड़ पौधों को खूब हिलता उसने देखा। उसे फिर कुछ हाथियों का हुंकार सुनाई दिया। बड़ी बड़ी टहनियों का टूटना भी उसी समय हुआ। सारा जंगल देखते देखते गूँजने लगा था।

चन्द्रवर्मा, जिस टहनी पर बैठा था उस टहनी से हटकर, आखिरी टहनी पर आ बैठा। जिस तरफ़ से आवाज़ आ रही थी, उस ओर अपना सिर मोड़ा।

उसने जो भयंकर दृश्य देखा, वह बड़े-बड़े बहादुरों को भी भयभीत कर सकता था।

गरम पानी की नदी को पार करके महासर्प एक हाथी को अपने शरीर से

लपेटकर, उसे खाने के लिए मुख खोलकर, हाथी के मुख को पकड़ रहा था। जान बचाने के लिए, हाथी चिंघाड़ता, हाथ पैर चला रहा था। उसके चारों ओर खड़े कुछ हाथी, सूंड उठाये, इधर उधर भागते जोर जोर से चिल्ला रहे थे। और कुछ कर न पाते थे।

उसके पैरों के नीचे अनेक वृक्ष, फड़ा फड़ टूट रहे थे। ऐसा मालूम होता था, जैसे वह महासर्प यह सब कुछ भी न देख रहा हो। कुछ भी न सुन रहा हो। हाथी पर अपनी पकड़ सख्त करता जाता

था। धीमे धीमे, वह अपने गुफ़ा के समान मुख में हाथी रखता जाता था। हाथी का चिंघाड़ना जारी था।

"भगवान मैंने बहुत भयंकर प्रदेश में पैर रखा है। अब तुम ही पर भरोसा है।" चन्द्रवर्मा ने मन ही मन सोचा।

उस गरम पानी के नदी के चारों तरफ़ के प्रदेश के मुकाबले में कपालिनी का जंगल, उद्यान-सा लगता था। उसे अब कई योजन चल कर शंख के घर पहुँचना था। परन्तु इस थोड़ी दूर में ही उसे जो आश्चर्यजनक अनुभव हुए थे उनके कारण उसका उत्साह ठंडा पड़ गया। अगर भगवान ने मेरी मदद न की तो इन भयंकर जंगलों में, पहाड़ों में, मेरा मर जाना निश्चिय है। चन्द्रवर्मा ने सोचा।

चन्द्रवर्मा ने इन कठिनाइयों के कारण हिम्मत हार कर उदास हो, पत्तों की झुरमुट में आंखे मूंद लीं। उसे उस समय भूख नहीं सता रही थी। वह जो काम करने निकला था वह कितना कठिन था, यह वह जान गया। उसने सोचा, अच्छा होगा, यदि वह जादूगरनी और शंख को छोड़ कहीं और जा सके। परन्तु कहाँ जाया

जाय! कैसे जाया जाय! यह विषम समस्या उसके सामने थी।

चन्द्रवर्मा धीमे धीमे सो गया। उसे न सूर्य का अस्त होना मालूम हुआ, न पशु पक्षियों का अपने घर वापिस जाना ही। अन्धेरा हो गया। आकाश में तारे जरुर झिलमिला रहे थे। पर कहीं चाँद न देखाई देता था।

उस वातावरण में ठीक आधी रात के समय वह झंझा के कारण उठा। उसने देखा कि उसका शरीर टहनियों पर से ऊपर उठा। चन्द्रवर्मा सोच ही रहा था कि एक ऐसी जगह औंधे मुंह गिरा, जो कम्बल की तरह चुभ रहा था। "पत्थरों पर तो नहीं गिरा, जान बची।" सोचता चन्द्रवर्मा उठने ही वाला था कि उसे वह प्रदेश झूमता-सा लगा। उसने आश्चर्य से एक तरफ़ देखा। सरकंडे की तरह की किसी चीज़ ने उसको देखने न दिया। उसने उसे हटाकर जो देखा तो एक पक्षी को यह कहते सुना :—

"हमारे लिए यह रात यहीं बिताना अच्छा है। भापवाली गरम पानी के नदी से जो हवा आ रही है, वह मुझे बहुत

अच्छी लग रही है। दर्द जाता-सा लगता है।" पक्षी ने कहा।

उसी समय थोड़ी दूर पर एक और पक्षी का हाँ कहना उसे सुनाई दिया।

चन्द्रवर्मा को तुरत पता लग गया कि वह कहाँ था। जब वह सो रहा था तो बड़े-बड़े मोर व पक्षी उस पेड़ पर आए जिस पर वह सो रहा था। उनके पंखों के चलने से जो तूफान चला वह पेड़ की टहनियों पर से पत्थरों पर न गिर कर सौभाग्य से भैरण्ड पक्षी की पीठ पर गिरा। हाथी जितने बड़े पक्षी को, हो सकता है वह चींटी सा लगा हो। परन्तु इससे पहिले कि वह उनकी नजर में आये, और हजम कर लिया जाय उसका वहाँ से उतर कर तुरत भाग जाना ही अच्छा था।

चन्द्रवर्मा यह सोच, पक्षी के पंखों में से चुप चाप नीचे उतर रहा था कि उसे आकाश चमकता-सा लगा। उसने सिर ऊपर उठाया। उसने देखा धधकती कान्ति करता एक पक्षी फड़ फड़ करता, ठीक उसी जगह उतर रहा था, जहाँ वह था। तुरत वह अग्नि पक्षी उसके पास आया, जिसके बारे में जादूगरनी ने उसे बताया था, कालसर्प ने उसको आगाह किया था। वह अग्नि पक्षी, शंख मान्त्रिक का था।

अग्नि पक्षी को उतरता देख, भैरण्ड पक्षियों ने सिर ऊँचा करके उसको सलामी दी। अग्नि पक्षी ने, ठीक सीधे उतरते हुए पक्षियों की भाषा में उनसे कहा—"मैं तुम्हें ही खोज रहा हूँ। अच्छा हुआ तुम यहीं मिल गये।"

"क्या काम है?" भैरण्ड पक्षी ने पूछा।

अग्नि पक्षी ने, नीचे उतरकर, पँखों को संवारते हुए कहा—

“मेरे मालिक शंख ने मुझे एक काम सौं.ा है। वह कोई कठिन काम नहीं है। बुढ़ापे से झुकी हुई एक जादूगरनी को उसने अपने पास लाने के लिए कहा है। परन्तु मैं यह काम स्वयं नहीं कर पा रहा हूँ। मैं दिन में देख नहीं सकता। रात में मेरा प्रकाश देखकर, वह जादूगरनी पहिले ही सावधान हो जाती है। इसलिए, चुपचाप तुम अब उस जादूगरनी के पास जाओ. और उसको चोंच में पकड़कर मेरे मालिक के पास लाओ। मैं बड़ा कृतज्ञ होऊँगा।”

यह सुनते ही भैरण्ड पक्षी कुछ रिझे “हम अब एक योजन भी नहीं उड़ सकते हैं। सूर्यास्त से हम समुद्रों में कितने ही द्वीप घूम घूम कर, पेट भरकर आये हैं। पँखों की दर्द हटाने के लिए, हम गरम पानी की नदी के पास पड़े ऊँघ रहे हैं। आराम कर रहे हैं। कल रात, हम तेरी मदद कर सकते हैं। अब नहीं जायेंगे।”

अग्नि पक्षी ने सन्तोष से पँख फड़फड़ाये। ऐसी आवाज की कि वह सारा प्रदेश गूँज उठा। “दिन में उस जादूगरनी को नहीं पकड़ा जा सकता है। वह स्वयं तो बहुत चालाक है ही। उसके पास कई बलवान सेवक भी हैं। कितने ही वर्षों से वह जादूगरनी रात में, बिना आँखें मूँदे जीती आई है। परन्तु कुछ दिनों से उसकी तन्दुरुस्ती बिगड़ गई है, इसलिए उतनी सावधान होकर नहीं रह पाती है, जितनी कि पहिले थी। तुम कहीं छुपे रहो—यकायक अपनी चोंच से उसको पकड़ लो। वह मन्त्रोच्चारण नहीं कर सकेगी और इस तरह वह तुम्हारा कुछ न बिगाड़ सकेगी। उसके बाद सीधे अगर

तुम मेरे मालिक शंख के पहाड़ पर आ गये, और उस जादूगरनी को तुमने उसके सामने फेंक दिया तो वह उसे सज़ा देगा। और तुम दोनों को उचित ईनाम देगा। तुम्हें शिकायत करने का कोई मौका न देगा।" अग्नि पक्षी ने कहा।

"तेरे मालिक को मुझे बड़े ईनाम देने की जरूरत नहीं है, यह काफ़ी है, अगर वह मुझे वह शक्ति दे कि जब मैं चाहूँ, तब सातों समुद्रों के सब द्वीपों में हो आऊँ।" एक भैरण्ड पक्षी ने कहा।

"मुझे इतना भी नहीं चाहिये मेरे लिये यह काफ़ी है, अगर वह मुझे एक ऐसा मन्त्र सिखाये, जिससे मौत मेरे पास न आये। मैं कभी न मरूँ।" दूसरे भैरण्ड पक्षी ने कहा।

"ये पागल पक्षी सोच रहे हैं कि मान्त्रिक शंख कोई भगवान है।" यह सोच चन्द्रवर्मा हँसा।

भैरण्ड पक्षी ने जो माँगा था, वह सुन सिर हिलाकर अग्नि पक्षी ने पूछा—"क्या कल दिन के समय मेरी जगह एक बार आ सकोगे? बहुत दूर नहीं है। मौका लगा तो मैं अपना मालिक को भी तुम्हें दिखाने की कोशिश करूँगा।" अग्नि पक्षी ने कहा।

भैरण्ड ने यह मानते हुए सिर हिलाया। तुरत अग्नि पक्षी आकाश में उड़ा, बड़ी तेज़ी से उत्तर दिशा की ओर चला गया। भैरण्ड पक्षी थोड़ी देर इधर-उधर का बातें करते रहे, फिर चोचों को भूमि पर रख वे सो गये।

(अभी है)

मुरगी की सैर

एक दिन एक मुरगी को बगुलों का चिल्लाना सुनाई दिया। जब उसने सिर उठाकर देखा, तो बगुलों का झुंड दक्षिण की ओर जा रहा था।

मुरगी पहिले कभी अपने आँगन से बाहर न गई थी। उसे भी बगुलों की तरह जाने की सूझी। उसने और मुरगियों से कहा—"मैं भी दक्षिण की ओर जाऊँगी।" वह पंख फड़फड़ाकर भागी। आंगन पार करते ही सड़क आई। सड़क पर गाड़ियाँ थीं। मुरगी ने कुछ दूर सड़क पर जाकर एक बाग देखा। उसमें फूलों के पौधे थे। माली उन्हें पानी दे रहा था। थोड़ी दूर बाद सड़क खतम हो गई। वहाँ बैंगनों का खेत था।

शाम तक मुरगी घर वापिस आ गई। उसने जो कुछ देखा था और मुरगियों को सुनाया।

चार महिने बाद, बगुले दक्षिण की तरफ़ से लौटे। उनमें से कुछ ने मुरगियों से मिलकर कहा—"हम दक्षिण से आरहे हैं। वहाँ कितने ही द्वीप हैं। कितने ही समुद्र हैं।"

"हमारी मुरगी भी दक्षिण होकर आई है।—वहाँ क्या है? जानना चाहते हो तो हमारी मुरगी से पूछो।" उन्होंने कहा।

अदल-बदल

आर्सिनो इलीरिया देश का राजा था। वह तब अविवाहित था। पर वह ओलिविया नाम की एक बड़े घर की लड़की से प्रेम करता था।

परन्तु ओलिविया राजा को पसन्द न करती थी। कुछ महीनों के अन्दर वह पिता और भाई को खो बैठी, इसे बहाना बनाकर, वह राजा के द्वारा भेजे गये दूतों को हमेशा दर्शन देने से इनकार करती रहती। "मैं सात साल तक शोक समुद्र से बाहर न निकलूँगी। मैं इन सात सालों में किसी को न देखूँगी।" उसने राज-दूतों को अपने नौकरों से कहलवाया।

क्योंकि सात साल तक वह अपनी प्रेयसी के पास प्रेम-पत्र भी न भेज सकता था, इस कारण आर्सिनो महाराजा भी, शोक-समुद्र में गोते लगाने लगा।

राजा की यह हालत थी कि इलीरिया के पास एक जहाज़ डूब गया। उस जहाज़ में बहुत-से यात्री थे। उसमें पेसलीन नगर के दो जुड़वें बच्चे थे। वे दोनों घंटे भर फ़र्क से पैदा हुए थे। दोनों का चेहरा-मोहरा बिल्कुल एक जैसा था। छुटपन में उनको पहिचानने के लिए, उनकी माँ, उन दोनों को अलग-अलग कपड़े पहिनाती। उनमें बड़ा लड़का था, उसका नाम सेबास्टियन और दूसरी लड़की थी, उसका नाम वयोला था। समुद्र में जहाज़ के डूब जाने के कारण—जहाज़ का कप्तान, कुछ ही लोगों को अपनी नाव में इलीरिया के तट पर ला सका। उनमें वयोला थी। पर सेबास्टियन न था।

वयोला इस बात पर खुश न हुई कि उसकी जान बच गई थी, पर हमेशा इसी

शोक में रहती कि उसका भाई समुद्र के हवाले हो गया था। जहाज़ के कप्तान ने उसे आश्वासन देते हुए कहा—"तुम्हारे भाई को कोई खतरा नहीं है। मैंने स्वयं उसको एक मस्तूल पकड़े, तट की ओर तैरते देखा है। वह जाकर ज़रूर कहीं न कहीं लगेगा। परन्तु तुम स्त्री हो, अकेली हो, इसलिए आगे की सोचो। तुम्हें कोई आश्रय दिखाकर ही मैं जाऊँगा।"

जहाज़ के कप्तान की बात सुनकर वयोला का कुछ हौसला बढ़ा। उसने कप्तान से पूछा—"यह क्या देश है! इस देश का राजा कौन है!" आर्सिनो का नाम बताये जाने पर, वयोला ने कहा—"जब कुछ समय पहिले मैंने इनका नाम सुना था। तब इनकी शादी न हुई थी।"

"वह तो एक लम्बी कहानी है।" जहाज़ के कप्तान ने उसकी प्रेम कहानी, और ओलिविया के बारे में बताया।

"तो उसके पिता और भाई भी गुजर गये!—मैं भी भाई के खो जाने पर दुखी हूँ। इसलिए अगर मैं उनकी सेविका बन गई, तो हम दोनों एक दूसरे को आश्वासन दे सकेंगी।"

"यह न हो सकेगा। भाई के मृत्यु के शोक में ओलिविया अजनबियों की शक्ल ही नहीं देख रही है!" कप्तान ने कहा।

"अगर यही बात है तो राजा के यहाँ, मर्द का वेष धारण कर नौकरी की जाय तो कैसे रहेगा! अकेली लड़की के लिए मर्द के वेष से तो कोई अच्छा कवच नहीं है।" वयोला ने कहा।

जहाज़ का कप्तान इसके लिए आवश्यक सहायता देने के लिए मान गया। उसने उसको थोड़ा धन देकर कहा—"ठीक वैसे ही कपड़े खरीद कर लाओ, जो

मेरा भाई पहिना करता था।" जहाज़ के कप्तान ने वैसा ही किया।

उसके खरीदे हुए कपड़े पहिनने के बाद, वयोला ठीक हूबहू सेबास्टियन की तरह दिखाई देने लगी। जहाज़ का कप्तान उसे साथ लेकर आर्सिनो महाराज के पास गया। "इस युवक का नाम सिज़ारियो है। हमारा जहाज़ समुद्र में डूब गया है, मैं जैसे तैसे इसे बचाकर यहाँ तक लाया हूँ। अच्छे खानदान का यह लड़का आपकी सेवा करता, यहीं आराम से रह जायेगा।" उसने कहा। राजा युवक को देखकर प्रसन्न हुआ। वह उसको अपने यहाँ रखने के लिए मान गया।

वयोला जब से राजा की नौकरी में लगी, तभी से राजा की आंतरंगिक-मित्र बन गई। राजा उसके सामने ओलिविया के प्रति अपने प्रेम और उसकी निष्ठुरता पर आँसू बहाता। उसका प्रेम ठुकरा दिया गया था। इसलिये वह किसी चीज़ में भी दिलचस्पी न दिखाता। हमेशा प्रेम गीत सुनता समय बिता रहा था। जबसे वेष बदलकर, वयोला उसकी नौकरी में आई थी, तब से वह उससे गप्पें लगाता रहता।

यह वयोला के लिए एक खतरा-सा हो गया। क्योंकि उसे भी वह प्रेम की बीमारी लगी और वह भी राजा से प्रेम करने लगी। ओलिविया से प्रेम करके राजा जितना तड़प रहा था, वह भी राजा से प्रेम करके, उतनी ही तड़पने लगी। वह सीधी तरह तो अपना प्रेम व्यक्त करना नहीं चाहती थी, फिर भी घुमा फिरा कर वह अपना प्रेम जताती आई थी।

एक दिन राजा ने कहा—"प्रेम करना पुरुषों को ही आता है, स्त्रियों को नहीं। इसीलिए ओलिविया मेरा प्रेम समझ नहीं पा रही है।"

"महाराज, यह न कहिये। मेरी एक बहिन है। उस एक पुरुष से प्यार है। उसने अपने प्रेम को अपने हृदय में रख रखा है। वह प्रेम उसको इस तरह खा रहा है, जिस तरह कीड़ा फूल को निगलता है। फिर भी वह हँस मुख बनी फिरती है।" वयोला ने कहा।

ये इस तरह बातें कर रहे थे कि ओलिविया के पास गया राजा का दूत वहाँ आया। उसने कहा कि ओलिविया ने कहा है कि
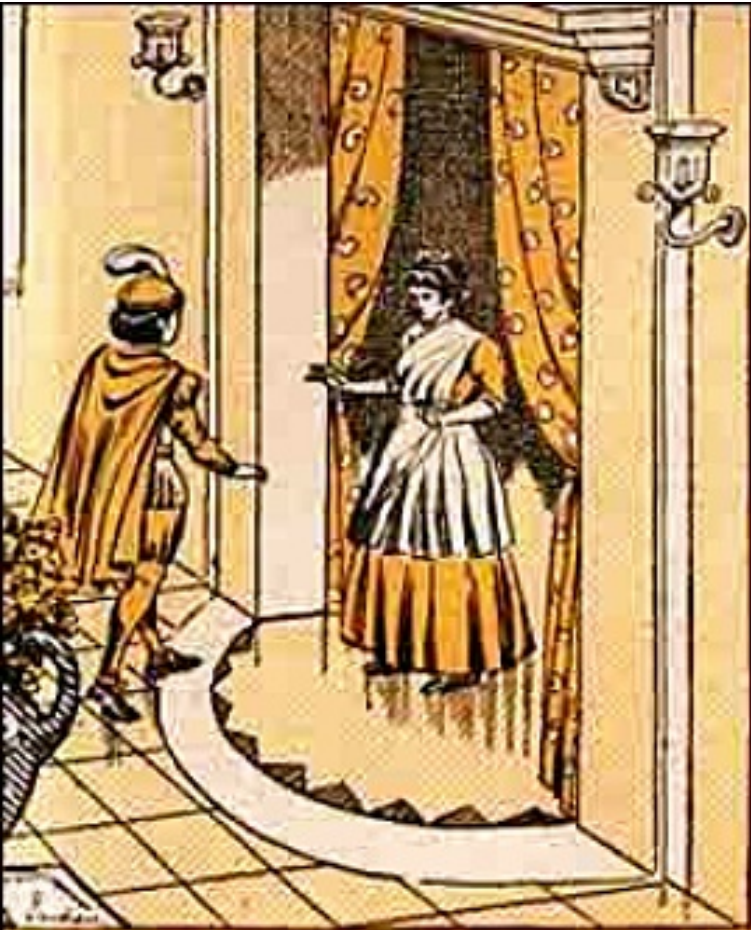
सात वर्ष तक किसी का मुख न देखूँगी। और मेरे पास किसी को न भेजा जाय।

"जो भाई के लिए इतना मातम मना रही है, उसका मन कितना कोमल होगा। अगर उस जैसी स्त्री को मुझपर प्रेम हो जाये तो कहना ही क्या?" राजा ने कहा। फिर उसने वयोला की ओर मुड़कर कहा—"सिज़ारियो इस बार तुम्हें मेरा दूत बनकर ओलिविया के पास जाना होगा। अगर तुम जैसे युवक को भेजा जाय तो वह कम से कम मिलकर दो चार बातें तो कहेगी।"

"अगर बातें करें, तो मुझे क्या कहना होगा, महाराज।" वयोला ने पूछा।

"तुम उनसे साफ साफ कहो, कि मैं उनसे कितना प्रेम करता हूँ। कैसे उनके लिए तड़प रहा हूँ।" राजा ने कहा।

उसे यह काम बिलकुल पसन्द न था। फिर भी वयोला, ओलिविया के घर गई। ओलिविया की दासी ने दरवाजा खोलकर बताया—"मालकिन की तबीयत ठीक नहीं है।"

"मुझे मालूम है, पर मुझे उन्हें देखना ही है।" वयोला ने कहा।

"सो रही हैं।" दासी ने कहा।

"इसीलिए बात करनी है।" वयोला ने कहा।

दासी ने जाकर ओलिविया से कहा—"मालकिन! आपको देखने के लिए कोई नौजवान आया हुआ है। जाने के लिए बहुत कहा पर वह जा नहीं रहा है। बहुत ज़िद्दी मालूम होता है।"

यह ज़िद्दी कौन था, ओलीविया ने देखना चाहा। इसलिए उसने कहा—"उसको अन्दर आने दो।"

वयोला ने नाटक के नायक की तरह अभिनय करते हुए कहा—"हे जगदेक

सुन्दरी, भुवनैक मोहिनी क्या आप ही इस घर की मालकिन हैं? मैं इस घर की मालकिन के लिए एक सन्देश लाई हूँ। यह सन्देश बहुत मेहनत से तैयार किया गया है। उसे मैंने कंठस्थ भी किया है।"

"आप आ कहाँ से रहे हैं?"

"मैंने इस प्रश्न का उत्तर कंठस्थ नहीं किया है।" वयोला ने कहा।

"क्या आप विदूषक है।" ओलिविया ने पूछा।

"यह तो मानता हूँ कि मैंने वेष बदल रखा है। पर मैं विदूषक नहीं हूँ।" वयोला ने कहा—"अगर आप ही इस मकान की मालकिन हो तो मैं आपका मुहँ देखना चाहता हूँ। जरा परदा तो हटाइये।" ओलिविया ने मुँह का परदा हटा दिया। हुआ यह कि वह ओलिविया, जो राजा का प्रेम ठुकरा रही थी दो तीन क्षण में ही उस युवक से प्रेम करने लगी। इस आकस्मिक प्रेम के कारण वह यह भी भूल गई कि उसने निश्चय कर रखा था कि सात साल तक किसी का मुँह न देखेगी। "आप में सौन्दर्य तो बहुत है। पर हृदय नहीं है। मेरे मालिक आपके लिए तड़प

रहे हैं। तप रहे हैं। आप उनकी क्यों नहीं सुनतीं?" वयोला ने पूछा।

"मैं उनसे प्रेम नहीं करती। वे भी यह जानते हैं। फिज़ूल तंग कर रहे हैं।" ओलिविया ने कहा।

"अगर मैंने ही आपसे प्रेम किया होता तो आपका नाम सब जगह चिल्लाता फिरता। जबतक आपका मन न लगता तबतक साँस न लेता।" वयोला ने कहा।

"अच्छा, आप जाकर अपने राजा से कहिये कि मैं उनसे प्रेम नहीं कर सकती हूँ। वे यह सुनकर क्या कहते हैं, यह

मौका मिलने पर मुझ से आकर कहिये।" ओलिविया ने कहा।

वयोला के बाहर चले जाने के बाद अपनी दासी को उसने बुलाकर कहा—"अभी जो युवक गया है वह अपनी अंगूठी यहाँ छोड़ गया है। यह उन्हें दे दो।" कहकर उसे भेजा। ओलिविया इस तरह यह बताना चाहती थी कि वह उससे प्रेम करती थी।

दासी के अंगूठी लाकर देने पर वयोला सब समझ गई। क्योंकि वह अपने साथ कोई अंगूठी न लायी थी, न उसने उसे ओलिविया के पास छोड़ा ही था। "अरे अरे, मेरे इस भेस ने ओलीविया को कितना धोखा दिया है। जितना मैं राजा के लिए तड़प रही हूँ उतना ही मेरे लिए ओलिविया तड़प रही हैं।" उसने मन ही मन सोचा।

प्रेम अन्धा होता है। वयोला ने वापिस आकर राजा से कहा—"महाराज, मैंने ओलिविया से बातचीत की। उन्होंने साफ़ साफ़ कह दिया है कि वे आपसे प्रेम नहीं कर सकतीं।" उसके यह कहने पर भी राजा निराश न हुआ।
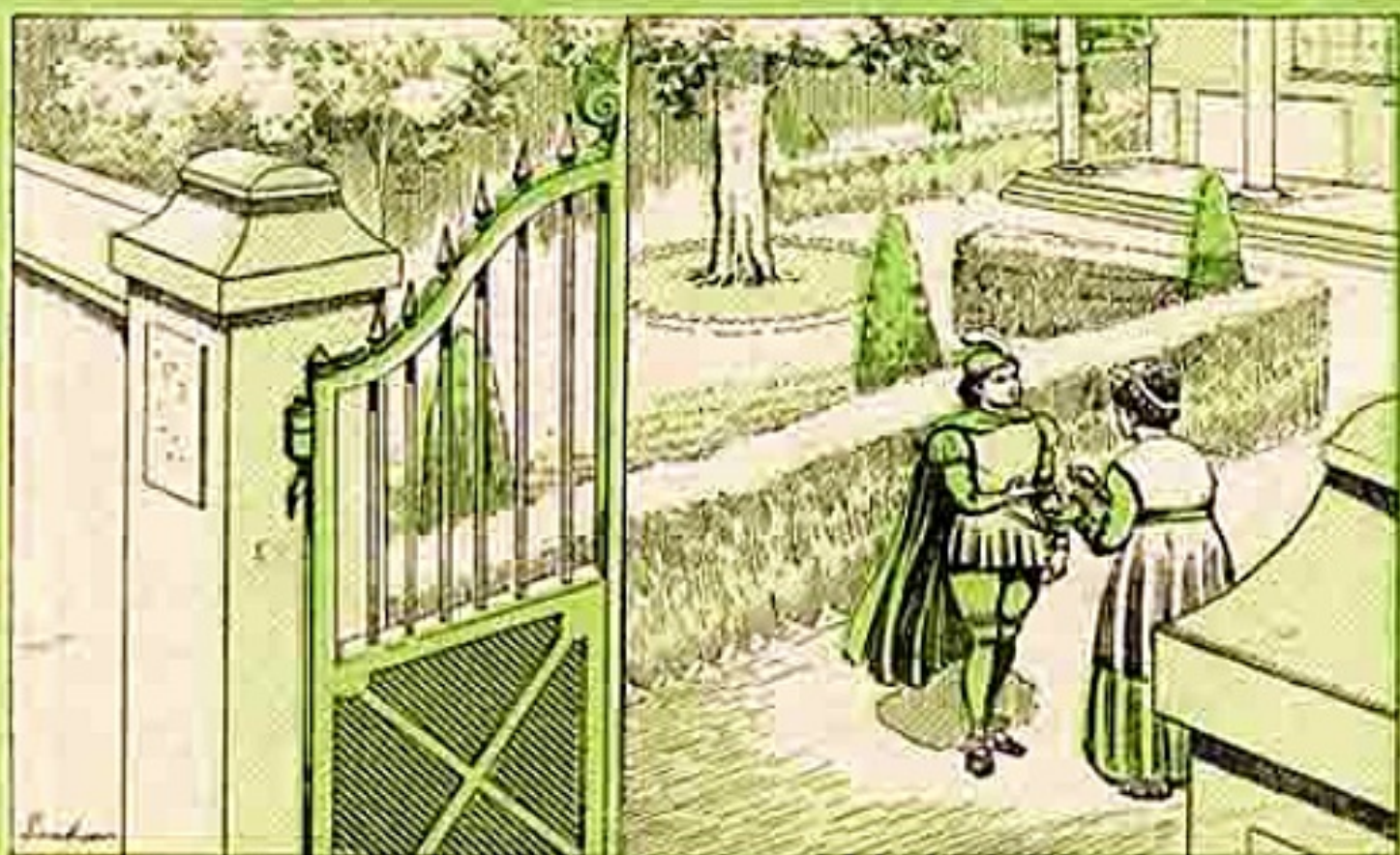
" सिज़ारियो, तुमने आधी विजय पा ली है। उन्होंने तुम्हें देखकर तुमसे बातचीत तो की। अगर तुम कल फिर गये तो उनका मन भी मेरी ओर मोड़ सकोगे।"

इसके बाद उसने एक लोक गीत गाने के लिए कहा। वह गीत सुनते ही वयोला आँसू बहाने लगी।

" यह क्या सिज़ारिया! क्या इस छोटी उम्र में तुम्हें भी इस प्रेम सर्प ने काटा है!" राजा ने आश्चर्य से पूछा। वयोला ने "हाँ" कहा। तो वह स्त्री कौन है! कैसी है! मुझसे क्यों नहीं कहा!" राजा ने पूछा।

"महाराज! वह आपकी उम्र की है। और आप जैसी ही है।" वयोला ने कहा। यह सुन राजा हँसा। "नादान है! कुछ नहीं तो मेरी उम्र की लड़की से भी क्या प्रेम करना है!" उसने सोचा।

अगले दिन जाते ही दासी उसको ठीक ओलिविया के पास जल्दी जल्दी ले गई।

"मैं अपनी राजा की ओर से फिर प्रेम भिक्षा माँगने आया हूँ।" वयोला ने कहा।

"तुम उनकी ओर से बात करोगे तो मैं नहीं सुनूँगी। अगर किसी और की तरफ

यह व्यक्ति भी राजा की तरह ओलिविया से प्रेम कर रखा था। उसने दासियों से मालूम कर लिया था कि ओलिविया उसके प्रेम को ठुकराकर राजा के दूत सिज़ारियो से प्रेम करने लगी थी। इसलिए वह वहाँ आया था। जब उस आदमी ने तलवार निकालकर युद्ध के लिए ललकारा तो वयोला का दिल थम-सा गया। वह उससे यह कहने वाली ही थी कि वह पुरुष न थी कि इतने में वहाँ एक आदमी आया। उसने तलवार वाले आदमी से कहा।

"अगर इस युवक ने आपका अपमान किया है तो उसके लिए मैं जिम्मेवार हूँ। आप मुझ से युद्ध कीजिए।" कहकर उसने भी तलवार निकाली। फिर सिपाहियों ने उसको आकर पकड़ लिया। यह सब वयोला को स्वप्न की तरह लगा। वह तुरत जान गई कि उसकी रक्षा करनेवाला कौन था, और उसको क्यों पकड़कर ले गये थे।

उसने वयोला की ओर मुड़कर कहा—"देखा, तुम्हारे कारण मेरी यह स्थिति हुई है। मैंने कहा भी था कि मैं इलीरिया में पैर न रखूँगा, पर तुम मानी नहीं।

से कहो तो मैं सुनने के लिए खुशी खुशी तैयार हूँ।" ओलिविया ने कहा।

यह सुनते ही वयोला की मुख सिमट सा गया। यह देख ओलिविया ने कहा—"तुम मुझे क्यों ऐसे देखते हो! मैं तुमसे प्रेम कर रही हूँ। मैं इस प्रेम को छुपा भी नहीं पा रही हूँ।"

"तुम्हारा प्रेम निरुपयोगी है, क्योंकि इस जन्म में किसी से प्रेम नहीं करने जा रहा हूँ।" कहती कहती वयोला जल्दी जल्दी चली गई। वह अभी थोड़ी दूर गई थी कि नहीं कि किसी ने उसको द्वंद्व युद्ध के लिए ललकारा।

कुछ साल पहिले मैंने इस देश के राजा के भांजे को युद्ध में घायल किया था। इसलिए मुझे देश से निकाल दिया गया था। अब बिना बहुत-सा धन दिये ये न छोड़ेंगे। मुझे वह धन वापिस दो जो मैंने दिया था।"

यह, वह कप्तान था जिसने सेबास्टियन को समुद्र में बचाया था। इलीरिया पहुँचते ही उसने उसे अपना बटुआ देकर कहा था—"जो तुम चाहो खरीद लो।" पुरुष वेष में वयोला को देखकर वह सोच रहा था कि वह सेबास्टियन ही था।

"आप कौन हैं! मैं नहीं जानता। आपने कभी मुझे पैसा नहीं दिया।" वयोला ने कहा, सिपाही उसको पकड़कर लेगये। जाते-जाते उस व्यक्ति ने वयोला से कहा—"मैंने कभी न सोचा था कि सेबास्टियन एक दोस्त को इस प्रकार दगा देगा।" यह कहकर वह चला गया।

इस बात से पता लगता था कि उसका भाई इलीरिया में था। अगर वह वहीं खड़ी रही तो वह आदमी फिर कहीं तलवार लेकर न ललकारे वह भी जल्दी-जल्दी महल में चली गई।

तलवारवाला आदमी वहीं मंडराता रहा उसे ऐसा लगा कि थोड़ी देर बाद उसका शत्रु उस तरफ आ रहा था। इस बार वयोला न आई थी, पर आया था उसका भाई सेबास्टियन "बिना युद्ध किये भाग गये। और अब फिर आये हो। कम से कम इस बार तो तलवार निकालो"—कहते हुये उस आदमी ने सेबास्टियन के गाल पर एक चपत लगाई। सेबास्टियन डरपोक न था। जिसने उसको फिज़ूल मारा था, उसको उसने इतनी जोर से मारा कि उसकी

हड्डियाँ भी हिली होंगी। दोनों ने तलवारें निकालीं।

अपने घर के पास इस झगड़े को होता देख ओलिविया जल्दी-जल्दी बाहर आई, और उनको उसने अलग किया। सेबास्टियन का हाथ पकड़कर वह अन्दर ले गई। उसका ख्याल था कि वह सिजीरियो था। पर उसने देखा कि सेबास्टियन में कुछ फर्क था। उसने पहिले की तरह नाक भौं न चढ़ाई। हाथ बढ़ाने पर उसने उसका हाथ भी पकड़ा। प्रेम से उसकी तरफ देखा भी।

सेबास्टियन यह न जान सका कि एक स्त्री, जिसने उसको कभी न देखा था, क्यों उससे इतने प्रेम से बातें कर रही थी। उसने सोचा कि शायद उसका दिमाग फिरा हुआ था। परन्तु और बातों में वह बिल्कुल पागल न लगती थी। दासी उसकी आज्ञाओं का इस तरह पालन कर रही थी, जैसे वह बिल्कुल ठीक हो।

अपने प्रेमी को अच्छी मूड़ में देखकर ओलिविया ने कहा—"और देरी क्यों की जाय! अभी पुरोहित को बुलाती हूँ। हम दोनों का विवाह हो जाये।"

वह बड़े घर की थी। बहुत सुन्दर थी। इसलिए सेबास्टियन इसके लिए मान गया।

विवाह हो गया। यह शुभ वार्ता अपने मित्र कप्तान के पास कहने सेबास्टियन गया। थोड़ी देर बाद राजा वयोला के साथ अपने आप ओलिविया के घर गया। वह उस घर के सामने गया था कि सिपाही कप्तान को वहाँ पकड़कर लाये।

कप्तान ने राजा से कहा—"इस युवक के कारण मैंने इस देश में कदम रखा। मैंने इसे समुद्र में बचाया। और अब तीन महीनों से इसकी देख-भाल कर रहा हूँ।

इस कृतघ्न को मैंने अपना सारा पैसा दिया। जुर्माना देने के लिए जब रुपया माँगा तो इसने देने के इनकार कर दिया।" कहते हुए मर्द के भेस में उसने वयोला को दिखाया।

राजा ने कप्तान से कहा—"क्या तुम्हारी अक्ल मारी गई है! यह लड़का तीन महीने से मेरे यहाँ नौकरी कर रहा है। और तुम कहते हो कि तुम इसकी देख-भाल कर रहे हो।"

इतने में ओलिविया बाहर आई। उसने राजा के पास वयोला को खड़ा देख सोचा कि यह वही युवक है, जिसके साथ उसने विवाह किया था। वह उसके साथ प्रेम से बात करने लगी।

राजा को यह देख गुस्सा आया कि सिज़ारियो ने उसे धोखा दिया था, वह उसका दूत बनकर गया और उसकी प्रेयसी से ही प्रेम करने लगा। "तुम्हारी खबर लेता हूँ। आओ, मेरे साथ आओ।" उसने वयोला ने कहा।

"महाराज, अगर आपने मेरे प्राण भी लिए तो मैं खुशी-खुशी मर जाऊँगा।" वयोला ने कहा।

"मेरे सिज़ारियो को कहाँ ले जारहे हैं!" ओलिविया चिल्लाने लगी।

"मैं उनके साथ जारहा हूँ, जिसको मैंने सबसे अधिक प्रेम किया है।" वयोला ने कहा।

"थोड़ा ठहरिये। हम दोनों का अभी अभी विवाह हुआ है। जिसने शादी की थी वह पुरोहित भी अभी नहीं गया है।" ओलिविया ने कहा।

"यह बिल्कुल झूट है, मैंने आपसे शादी नहीं की है।" वयोला ने कहा।

ओलिविया ने पुरोहित को बुलवाया। पुरोहित ने कहा कि उसने उन दोनों का विवाह करवाया था। राजा ने उसकी गवाही पर विश्वास कर लिया। उसने वयोला से कहा—"मैंने कभी न सोचा था कि तुम मुझे यों धोखा दोगे, मुझे कभी अपना मुँह न दिखाओ।" वह यह कहकर चला गया।

इतने में सेबास्टियन सामने से आया। ठीक एक जैसे दीखनेवाले सेबास्टियन और वयोला को देखकर, राजा, ओलिविया, पुरोहित, सबको आश्चर्य हुआ।

परन्तु भाई को देखते ही वयोला ने कहा कि वह स्त्री थी और पुरुष का वेष धारण किये हुये थी। सेबास्टियन ने कप्तान को पहिचानकर उसको उसका बटुआ दिया। राजा को सिर्फ यही नहीं पता लगा कि उसका नौकर निर्दोष था, बल्कि यह भी पता लगा कि वह उससे इतने दिनों प्रेम भी कर रही थी।

ओलिविया ने शादी कर ही ली थी। इसलिए राजा ने, उसी पुरोहित द्वारा अपनी शादी वयोला से करवाई, उसके बाद सब सुख पूर्वक रहने लगे।

लब्धप्रणाशम्

किसी नगर में किसी समय था
एक बड़ा निर्धन रथकार,
निकला घर से एक समय वह
करने को कोई रोजगार।

एक ऊँटनी मिली राह में
बच्चा था उसका नवजात,
ले आया रथकार उन्हें घर
लगा खिलाने कोमल पात।

मोटी ताज़ी हुई ऊँटनी
बच्चा भी हो चला जवान,
घंटी बजती सदा गले में
दौड़ा करता पवन समान।

रथकार ने देख मुनाफा
लिए कितने ही पाल,
ऊँटों के दल का मालिक बन
रहने लगा बहुत खुश हाल।

ऊँट सयाने जितने थे वे
कहते 'यह बच्चा नादान!
घंटी सुनकर शेर किसी दिन
ले लेगा ही इसकी जान।'

लेकिन घंटीवाला बच्चा
सुनकर भी दे सका न कान,
और एक दिन सचमुच उसकी
किसी शेर ने ले ली जान।

इसीलिए कहता हूँ भाई,
सुने नहीं जो हित की बात,
करे न उसपर नियति भला क्यों
प्रबल मृत्यु का ही आघात?

वन में भूखा घूम रहा था
चतुरक नामक एक सियार,
एक मरे हाथी को लखकर
लगी टपकने जी से लार।

पर हाथी का चमड़ा मोटा
सका नहीं दाँतों से चीर,
उधर क्षुधा थी बहुत प्रबल औ'
धर पाता था जरा न धीर।

"श्री भारतीभक्त"

सिंह एक सहसा तब आया
कहा स्यार ने माथा टेक—
'स्वामी भोजन प्रस्तुत है यह
मैं तो हूँ बस सेवक एक!'

कहा सिंह ने—'मैं न कभी भी
खाता कोई मरा शिकार,
तू ही खा अब इसे पेट-भर
है मेरा सेवक हुशियार।'

सिंह गया जब चला वहाँ से
आया एक वहाँ पर बाघ,
पर सियार वह डरा न बिलकुल
था वह बहुत पुराना घाघ।

कहा—'सिंह का भोजन है यह!'
सुन बाघ जिसे झट गया भाग,
चीता एक वहाँ फिर आया
जिससे बोला भर अनुराग—

'सिंह गया है दूर, इसे तुम
खाओ मेरे भांजे वीर!'
यह सुनकर चीते ने झटपट
डाला उस हाथी को चीर।

तभी सियार ने कहा अचानक
'भागो भांजे, आता शेर!'
सुनते ही यह भागा चीता
नहीं जरा उसने की देर।

फिर चतुरक ने निर्भय होकर
शुरु किया अपना आहार,
किंतु अचानक उसी समय फिर
आ धमका इक अन्य सियार।

चतुरक ने भरकर गुस्से में
आँखें अपनी लाल तरेर
किया युद्ध उससे तत्क्षण औ'
दिया वहाँ से उसे खदेड़!"

कथा सुना यों कही मगर से
बंदर ने आखिर यह बात—
"बुद्धि चातुरी औ' पौरुष अब
दिखलाना है तुमको तात।
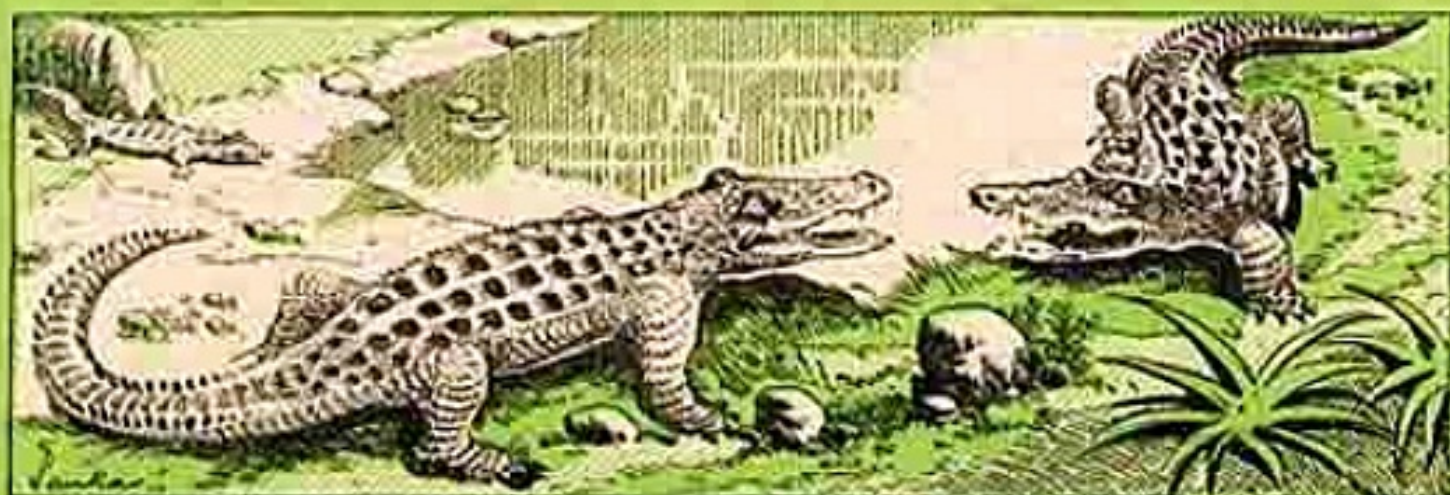
भांज कहां है !

"आपने अच्छी कॉफ़ी देखकर लाने के लिए कहा था न ! तीन जगह पीकर, देखकर आया हूं ।"

"मैं बचपन में अपने दान्त सफ़ेद मांजा करती थी ।"

"क्या इसीलिए तुम्हारा दान्त उखड़ गये हैं ।"

मैं घोड़े पर बैठकर झूम रहा हूं । तुम गधे पर चढ़कर झूमो पिताजी ।"

"नक़ल करना पूरा हो गया है ? गलती देखने के लिए ऐनक नहीं दिखाई देती ।"

पत्नी-गुलाम

विक्रमार्क तो हठी था ही। फिर वह पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव को उतारा, और मौन हो श्मशान की ओर जाने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, मनुष्य चंचल स्वभाव के होते हैं। उनमें कभी उदार भाव, उदात्त उद्देश्य आते भी हैं तो वे हमेशा उनके मन में नहीं रहते। समुद्र की तरंगे, जिस प्रकार आकाश की ओर उठती हैं और फिर स्वतः गिर जाती हैं, उसी तरह उनके उद्देश्य, आदर्श भी काफ़ूर हो जाते हैं। यह दिखाने के लिए जिहल नाम के युवक की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनानी शुरू की।

किसी समय, भरुकच्छप नगर में जिहल नाम का वैश्य नवयुवक रहा करता था।

वेताल कथाएँ

वह धनी था। सुन्दर था। जब उसकी उम्र के लड़के पत्नी ढूँढ़ते फिरते थे तब वह मेहनत करके व्यापार किया करता। थोड़े दिनों में ही वह व्यापार आदि में बहुत चतुर और समर्थ हो गया। उस नगर के व्यापारी, जिनमें से कई उससे उम्र में दुगने थे, उसकी सलाह पर निर्भर रहते। उसकी कीर्ति सारे नगर में फैल गई।

जिहल को, शादी में लड़की देने के लिए कितने ही करोड़पति कोशिश कर रहे थे। कितनी ही सुन्दर कन्यायें उससे विवाह करने के लिए उतावली हो रही थीं। परन्तु जिहल विवाह के बारे में न सोच रहा था। "मेरी उम्र अभी पच्चीस वर्ष की भी नहीं है। यवनों से मैं व्यापार करने की सोच रहा हूँ। व्यापार के चल पड़ते ही मैं शादी के बारे में सोचूँगा।" जिहल कहता आया था।

यवन देश ले जाने के लिए उसने एक नौका तैयार करवाई। उसमें बहुमूल्य चीज़ें चढ़ाई गईं। अच्छा मुहूर्त देखकर, अपने लोगों को लेकर जिहल नौका में यवन देश के लिए निकल पड़ा। जिहल के नाविक पहिली बार उस तरफ़ जा रहे थे।

कुछ सप्ताह बीत गये। नौका में पीने का पानी, खाने की सामग्री खतम हो गई। उनको फिर से लेने के लिए वे नौका को एक किनारे पर ले गये। जिहल और उसके आदमी किनारे पर उतरे और मनुष्यों को खोजने लगे। कुछ दूर जाने के बाद वे एक ऐसे प्रदेश में पहुँचे, जहाँ पहाड़, जंगल आदि थे। वहाँ जंगली लोग थे। वे अपने ईलाके में किसी को न आने देते, और जो आते उन्हें जिन्दा बाहर न जाने देते।

जिहल के लोग अभी उस ईलाके में कुछ दूर ही गये थे कि न जाने कहाँ से

उन पर बाण बरसने लगे। उस वर्षा के कारण बहुत से लोग मर गये, जो बचे खुचे, पीठ मोड़कर आगे जा रहे थे कि वे उन जंगलियों के भालों के शिकार हुये। जिह्ल पासवाले गढ़े में गिरा और जैसे तैसे जंगलियों के बाण और भालों का शिकार होने से बच गया। उसके लोगों में दो ही थोड़ा बहुत घायल होकर नौका तक वापिस पहुँच सके। शायद कोई और भी आ सके, यह सोचकर उन्होंने दिन भर प्रतीक्षा की। जब कोई न आया तो उन्होंने सोचा कि सब भर मरा गये थे। वे नौका को भरुकच्छप नगर ले गये।

जिह्ल ने उस समय अपने को बचा तो लिया था, पर ऐसा लगता था कि उस बीयाबान पहाड़ी ईलाके में बेमौत मरना ही होगा। उसने एक पहाड़ी गुफा में पनाह ली। उसे आस-पास न कोई खाने की चीज़ ही दिखाई दी, न पानी ही। उसे डर था कि अगर उन्हें ढूँढ़ता वह दूर गया तो जंगली उसे मार देंगे। वह थकान और भूख के कारण बेहोश गिर गया।

जब उसे होश आई, तो उसके पास एक जंगली स्त्री खड़ी थी। उसकी उम्र, सोलह, सत्रह साल की होगी। जंगली स्त्रियों की तरह उसके गले में तरह तरह की मालायें थीं।

उसको देखते ही पहिले जिहल डरा। पर जब वह उसको देख कर मुस्कराई, तो उसका डर जाता रहा। फिर उसको लगा कि वह बहुत ही सुन्दर थी। उन भद्दे आभूषणों के होने पर भी, जिहल को लगा कि उसने उतनी सुन्दर स्त्री पहिले कभी कहीं न देखी थी।

वह लड़की भी जिहल को देखकर जान गई कि वह बहुत सुन्दर था। वह उससे प्रेम करने लगी। वह जानती थी कि अगर उसकी जाति वालों ने उसे देखा तो वे उसे मार देंगे। उसका भोजन और जल की खोज में उस प्रदेश में घूमना फिरना खतरे से खाली न था। इसलिये ईशारा करके उसने उसे एक पहाड़ी ईलाका दिखाया। वह निर्जन जगह थी। वहाँ जिहल के नहाने के लिए, पीने के लिए अच्छा पानी था। आराम करने के लिए छाया थी। उसको वहाँ ठहरने के

लिए कहकर, वह लड़की उसके लिए भोजन लाने के लिए चली गई। थोड़ी देर बाद वह भोजन लाई। अन्धेरा होने तक वह उसके साथ रही। उसको उसने तरह तरह के फूलों की मालायें बनाकर दीं। सुन्दर पक्षी दिखाये। उसने रात को, उसे सोने के लिए अच्छी जगह दिखाई। यह ईशारा करके कि वह फिर वापिस आयेगी, वह चली गई।

उन दोनों की एक भाषा न थी। एक जाति न थी। तौर-तरीके न थे। तो भी जिहल उससे प्रेम करने लगा। जबतक वह उसके साथ रही वह अपने कष्ट भूल गया। उसके जाते ही, उसके कष्ट, मानों दुगने होकर उसको सताने लगे। इस डर से कि कहीं वह फिर शायद दिखाई ही न दे, उसने आँखे न मींचीं। अगले दिन उसका मुँह देखते ही उसका भय, कष्ट, सब काफ़ूर होगये, और उसे वर्णनातीत आनन्द हुआ।

जिहल ने तीन महीने, उस लड़की के रक्षण, भरण, पोषण में काट दिये। प्रकृति के सौन्दर्य को देखने का आनन्द, स्वादिष्ट चीज़ों के खाने का आनन्द, ठंडे नाले में स्नान कर, पहाड़ की साफ़ हवा लेना का आनन्द, उसने अपने जीवन में पहिली पहिली बार पाया था। अमीरी थी पर इनका आनन्द न था।

यही नहीं, जिहल पहिली बार किसी को प्रेम कर रहा था। तबतक किसी ने उसके कष्ट सुखों में हिस्सा न लिया था। वह मौका इस जंगली लड़की के कारण मिला। वह अपने लोगों से दूर था। पास एक कौड़ी न थी। जान खतरे में थी। फिर भी वह उस लड़की की कृपा के कारण ऐसे सुख पा रहा था, जो शायद स्वर्ग में भी न मिलें।

उन तीन महीनों में वे एक दूसरे की भाषा जान गये। एक दिन जिह्ल ने उस लड़की से कहा—"मैं यहाँ इस तरह कब तक रहूँ! मेरे भी घर वगैरह हैं। पर अगर तुम न हो, मैं वह सब कुछ नहीं चाहता। मेरे साथ आकर, मुझ से शादी कर लो। तुम्हें वे सुख दूँगा, जो महारानी को भी मयस्सर नहीं होते।"

वह इसके लिए मान गई। एक दिन अन्धेरा हो जाने के बाद, वे दोनों वह जंगली ईलाका छोड़कर समुद्र के किनारे गये। उन्हें सौभाग्य से एक नौका वहाँ मिली। जिह्ल अपनी पत्नी को लेकर, उस नौका में भरुकच्छप ले गया।

भरुकच्छप नगर का बन्दरगाह पास ही था कि उसमें एक आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ। उसे ऐसा लगा, जैसे अभी सोकर उठा हो। उसके मन में तबतक जो ख्याल थे, वे सब गायब हो गये। वह फिर से मामूली व्यापारी हो गया। तीन महीने व्यापार करने से उसको कितना नुक्सान हुआ था, उसने हिसाब लगाया। समुद्र में जब कभी गया था वह साथ कुछ न कुछ माल लाया था। इस बार वह अपने साथ क्या ला रहा था! एक जंगली लड़की। अगर उसको गुलाम के तौर पर बेच दिया गया, तो काफ़ी धन मिलेगा, और इस तरह उसका नुक्सान कुछ कम हो सकेगा। इसके सिवाय उस लड़की का उसके लिए कोई लाभ न था।

बन्दरगाह में घुसते ही, जिह्ल ने उस लड़की को, व्यापारियों को बेचने के लिए दिखाया। यह देखते ही वह जोर से चिल्लाई—"मुझे मत बेचिये। मैं गर्भवती भी हूँ।"

"तुमने यह क्यों नहीं कहा?" कहकर जिहल ने उसे और उसके गर्भवाले बच्चे के साथ, दुगनी कीमत पर गुलाम के रूप में बेच दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा! जिहल ने ऐसा काम क्यों किया? उस लड़की ने उसकी जान बचाकर, उससे प्रेम करके, उसका उपकार ही किया था। अपकार तो किया न था। क्या यह झूट है कि उसने उससे प्रेम किया था? क्या उसको साथ इसीलिए लाया था ताकि वह उसे बेच सके?" "या प्रेम....केवल दगा ही है? या प्रेम की बातें झूट हैं?"

अगर तुमने इन प्रश्नों का उत्तर जान बूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

"उस कुम्रदेश में जिहल ने सचमुच उस लड़की से प्रेम किया था। अगर वह अपने देश वापिस न आता, जिन्दगी भर वहीं रह जाता तो वह उसे अपने प्राणों से भी अधिक प्रेम करता। प्रेम दग़ा बिल्कुल नहीं है। वह आदमियों को अच्छा ही बनाता है, बुरा नहीं। परन्तु स्वार्थमय सभ्यता में प्रेम उसी प्रकार सूख जाता है, जिस प्रकार पानी के बगैर पौधा। जिहल अगर अपना प्रेम रखना चाहता था, तो स्वार्थमय जीवन को छोड़कर उसे जंगल में ही रहना चाहिये था। दोनों का चाहना ही उसकी गल्ती थी। इसीलिए यद्यपि उसने वादा किया था कि वह उसे महारानी बनायेगा, उसने उसे गुलाम बनाकर बेच दिया।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

[२]

कनाना छोटा था, पर उसने रशीद की आँखों में खूब धूल झोंकी। वह सोच रहा था कि सफ़ेद ऊँट तयाफ़ की ओर गया था। वे लोग, जो तयाफ़ से आते हुए रास्ते में कनाना से मिले थे रशीद के आदमियों से कहेंगे कि उन्होंने दो ऊँट देखे थे। और उसका भाई, दस दिनों में अपनी टोली में जा ही मिलेगा।

परन्तु कनाना को अब अकेले दूसरी परीक्षा में उत्तीर्ण होना था। यह कोई साधारण परीक्षा न थी। फारस से जो रास्ता मक्का जाता था, वह बरसात में तो इतना भयंकर न था, कई जगह पानी और ऊँटों के लिए घास मिल जाती थी। रास्ते में सफ़र करनेवाले भी मिल जाते। परन्तु गरमियों में वह रास्ता निर्जन रहता। कहीं पानी नहीं मिलता। कुयें भी सूख जाते थे। कहीं तिनका भी नहीं दिखाई देता—ऐसे रास्ते पर कनाना जा रहा था। उसने जहाँ और पड़ाव करते थे, पड़ाव नहीं किया। काले ऊँट पर वह आगे बढ़ाता गया।

बारह दिन गुज़र गये, कनाना प्यास से मरा जा रहा था। उसकी आँखों को भ्रम होने लगा था। उसे ऐसी जगह पानी दीखने लगा था जहाँ पानी न था, मैदान न थे। नगर दिखाई देने लगे, जहाँ नगर न थे। परन्तु वह जानता था कि वे सब भ्रम थे। खलीफ़ा का काला ऊँट भी उसी हालत में था।

ऊँट को ऐसा लगा जैसे दूरी पर एक कुँआ दीख गया हो। वह जैसे तैसे मरते

मोहम्मद यूसुफ

जीते कुँए के पास गया। कुँए में एक बून्द पानी न था। जो रेत बाहर थी वही अन्दर थी। ऊँट बेहोश गिर गया।

कनाना उस पर से उतरा। उसे नींद आ गई थी। अगर उसने आँखें मूँद लीं तो फिर न उठेगा, यह वह जानता था। अपनी रोटी ऊँट के मुख के पास रखकर वह लड़खड़ाता आगे बढ़ा। चल तो रहा था, पर पूरी तरह उसे होश न थी।

वह मन ही मन सोच रहा था कि बसरा उतनी दूर नहीं रह गया था। उसे डर था कि ऊँट के साथ वह भी रास्ते में गिर जायेगा।

सूर्य अस्त हो गया। अन्धेरा हुआ। अन्धेरे में कनाना को दूरी पर कहीं थोड़ी-सी रोशनी दिखाई दी। उसकी जान में जान आ गई। वह सोता जागता, आँखें खोलता, मींचता डगमगाता चला आ रहा था।

यकायक उसको सामने कुछ छाया दिखाई दी। वे तम्बू थे। खालीद की सेना वहीं थी। किसी सैनिक ने उससे कुछ पूछा। कनाना ने कहा—"मुझे जल्दी खालीद के डेरे में ले जाओ। मैं खलीफ़ा के पास से चिट्ठी ला रहा हूँ।" फिर वह बेहोश गिर गया।

उसने खालीद के डेरे में आँखें खोलीं। पास खड़े सैनिकों से कहा—"एक रात के सफ़र की दूरी पर, सूखे कुँए के पास मेरा काला ऊँट गिरा पड़ा है। उसके पास पानी ले जाओ। वह मक्का से तेरह दिन में खलीफ़ा की चिट्ठी लाया है।"

खालीद ने खलीफ़ा की चिट्ठी पढ़ी। उसके सैनिकों ने खलीफ़ा के ऊँट की रक्षा की।

* * *

कुछ ही दिनों में एक बहुत बड़ी सेना सीरिया की ओर चली। वह सेना खालीद की थी। उसमें कई अरब सपरिवार भरती हुए। उनके पीछे उनके परिवार थे। खालीद के अंगरक्षक इस सेना के आगे चल रहे थे। उनके आगे भी कुछ सैनिक थे। उनमें, एक पालकी में जनाना था। कहीं उसे गरमी न लगे, इसलिए उस पर एक कम्बल डाला गया। उसके पीछे काला ऊँट चल रहा था। वह जिस दिन चला था, उस दिन बहुत कमज़ोर था। पर जैसे जैसे वह चलता गया, वह सुधरता गया। वह खलीफ़ा का ऊँट था। उस पर भी कम्बल डाल रखा था, ताकि उसे धूप न लगे।

जो उस सेना में भरती हुये थे, उन्हे खालीद पर पूरा विश्वास था। उसने एक ही समय में डमास्कस का घेरा डाला हिरोक्लियस की एक लाख सेना से मुकाबला किया—उसने इधर हिरोक्लियस की सेना को हराया, और उधर डमास्कस को भी वश में कर लिया। उस युद्ध में भाग लेने वाले, कई इस सेना में भी थे। कनाना पासवाले सैनिकोंको खालीद की प्रशंसा करते सुन फ़ूला न समाया। परन्तु उसे हिंसा का मार्ग पसन्द न था।

चार दिन, पालकी में सवारी करने के बाद, कनाना की हालत इतनी सुधर गई थी कि वह काले ऊँट पर सवारी कर सकता था। खालीद ने उसको कीमती पोषाक, तलवार और भाला दिलवाया। परन्तु कनाना ने उनको लेने से इनकार करते हुए कहा—"मैंने कभी भाला नहीं पकड़ा है, मेरे लिये गड़रिये के कपड़े काफी हैं।" वह तो चाह रहा था कि पीछे आनेवाली स्त्रियों के साथ आये। पर वह सेना उसका इसतरह सम्मान कर रही थी, जैसे वह महायोद्धा हो। जो कोई खालीद के सामने सलाम करता, वह कानाना को भी सलाम करता। उसे फिर भागने की सूझी। वह जानता था कि बेनिसाद की टोली कहाँ थी। जब यह सेना, उसकी टोली के पास पहुँचेगी, तब उसने भागने की ठानी।

एक दिन शाम को सेना ने रेगिस्तान में पड़ाव किया। कनाना का तम्बू खालीद के तम्बू के पास ही था। "कल यह सेना हमारी टोली के पास से गुजरेगी। मैं जैसे भी हो, बचकर अपने लोगों में जा मिलूँगा।" कनाना ने भोजन करते हुये कहा।

इतने में खालीद के तम्बू में से यह सुनाई दिया—"जो हमारे पास रसद है, वह तीन रोज के लिए ही काफ़ी होगी।"

यह सुनते ही कनाना ने खालीद के पास जाकर कहा—"हुज़ुर, बेनीसाद टोली पास है। छः सप्ताह पहिले ही फ़सल कटी है। उनके पास कम से कम, पाँच सौ ऊँटों के ढोने लायक, अधिक अनाज होगा। हुक्म हो तो परसों सबेरे तक अनाज ले आऊँगा।"

सूर्यास्त के समय ऊँट तैयार कर दिये गये। धान खरीदने के लिए आवश्यक धन दस ऊँटों पर रखा। अनाज़ लाने के लिए बोरे बीस ऊँटों पर डाले गये। एक ऊँट पर वे उपहार थे, जो खालीद, कनाना के पिता के पास भेज रहा था। और सौ घुड़सवार को साथ लेकर कनाना अपने लोगों से मिलने निकला।

"हमारे सीरिया तक पहुँचते तक रसद आदि, का इन्तजाम करना तुम्हारी जिम्मेवारी है।" खालीद ने कनाना से कहा।

कनाना के अपनी टोली तक पहुँचते, आधी रात हो गई। तम्बुओं के बाहर बंधे सफेद ऊँट ने उसे पहिचान लिया।

तुरत कनाना का पिता बाहर आया। बाप-बेटे ने एक दूसरे को गले लगा लिया।

"मेरी गलती माफ करो, बेटा। तुमने वह पराक्रम दिखाया है, जो कभी मैंने अपनी जिन्दगी में न दिखाया था। मैं तेरी कायरता पर शर्मिन्दा था, अब तेरी बहादुरी के कारण शर्मिन्दा हूँ।" पिता ने कहा।

कनाना ने कुछ कहना चाहा। पर मुख से बात न निकली। आनन्द के आँसू बहाता, उसने पिता का और जोर से आलिंगन किया। वह, कनाना जो बीस

डाकुओं से भी न घबराया था, पिता की बात सुनकर कुछ चकराया।

पिता ने सम्भलकर कहा—"अरे, क्या सो रहे हो! उठो। कनाना वापिस आया है।" फिर क्या था, सब जगह गूँजने लगा—"कनाना आया है।" सब उठे। वे पहिले ही जान गये थे कि उसने अपने भाई और ऊँट को कैसे छुड़वाया था। यही नहीं खलीफ़ा के आदमी कनाना के पिता को सोने की मुहरों से भरी एक थैली दे गया था। अब कनाना बहुत से उपहार लेकर, सौ घुड़सवारों के साथ स्वयं आया था। बेनीसाद की टोली ने कभी इतना सम्मान न पाया था।

सब जगह मशालें जलाई गईं। कनाना के सम्मान में दावत दी गई। अतिथियों के सम्मान में स्त्रियों ने देशभक्ति के गीत गाये। वे गीत पुराने थे। पर जहाँ-जहाँ और नाम था उन्होंने वहाँ वहाँ कनाना का नाम गाया। यह गीत सुनते-सुनते "मरुभूमि भयंकर" को नया जोश आया। उसने खालीद की सेना में भरती होने का वचन दिया। तुरत और दो सौ आदमी भी सेना में भरती हो गये।

अगले दिन दुपहर को, फ्नाना और उसके साथ आनेवाले सो गये। बेनीसादो ने इस बीच अनाज के बोरे तैयार कर दिये। अपने आयुधों को भी तेज किया।

खलीफ़ा ने जो काम उसे सौंपा था, फ्नाना ने उसको सफलतापूर्वक किया। परन्तु वह सेना से भाग जाने के अपने इरादे में कामयाब न हो सका।

*   *   *

सीरिया से आई हुई सेना, और अरेबिया से आई हुई सेना ने पालस्तीन की सीमा पर डेरे डाले। खालीद ने फ्नाना को अपने डेरे में बुलाकर कहा—"शत्रु सेना हमारे पास आरही है। उनके बारे में तरह-तरह की जानकारी मिल रही है। क्या तुम जाकर ठीक ठीक जानकारी लाओगे। उसके लिए तुम क्या चाहते हो?"

"मुझे एक घोड़ा दीजिये और आपके कमर में बँधी पेटी दिलवाइये।" फ्नाना ने कहा।

खालीद हमेशा अपनी कमर में एक नीले रंग की पेटी बांधे रखता था। वह ऊँट के चमड़े की बनी थी। उस पर रंग लगाया गया था। उसको खालीद के

सैनिक दूर से पहिचान लिया करते थे। अरेबिया के रेगिस्तान में किसी और के पास उस रंग की पेटी न थी।

"तुम जो घोड़ा चाहो, ले लो। पर तुम मेरी पेटी क्यों चाहते हो?" खालीद ने पूछा।

"मैं उसको अपनी कमीज़ के अन्दर छुपाऊँगा। मेरे जाने के बाद आप यह घोषणा करवाइये कि "कोई आदमी आपकी पेटी लेकर दुश्मनों में जा मिला है। यह भी घोषणा कीजिये कि अगर उसका कोई टुकड़ा भी लायेगा तो उसको ईनाम दिया जायेगा।" कनाना ने कहा।

खालीद ने बिना कुछ रहे, अपनी पेटी उतारकर कनाना को दे दी। कनाना ने उसे भक्तिपूर्वक कमीज़ के अन्दर कमर में बाँध लिया। उसने खालीद को प्रणाम किया। उसका आशीर्वाद पाकर डेरे से बाहर आकर, खालीद के घोड़ों में से एक अच्छे घोड़े को चुनकर, उस पर सवार हो अन्धेरे में निकल गया।

अगले दिन, डेरों में कोई चहल-पहल न थी। सैनिकों ने सुना कि खालीद की पेटी कोई चुरा ले गया था, अगर उसका एक टुकड़ा भी किसी ने लाकर दिया तो, उसे ईनाम दिया जायेगा। सुना गया कि पेटी की टुकड़े पर सोने की मुहरें फैलाकर दी जायेंगी।

खालीद, हाथ बाँधे, शत्रुओं के आने की प्रतीक्षा करता दिखाई दिया। सैनिकों ने समझा कि वह आदमी पेटी के लिए शोक कर रहा था। यह अनुमान अगले दिन और तीसरे दिन और भी पक्का हो गया। खालीद के सैनिक, उस पेटी को जोर शोर से खोजने लगे।

(अभी है)

[२]

सिद्धार्थ ने एक दिन आराम से बाग में बिताया। वे तालाब में खेले कूदे। अच्छी अच्छी पोषाकें पहिनीं। खूब खुशियां मनाईं।

सूर्यास्त हो गया। ठीक उसी समय यशोधरा ने एक लड़के को जन्म दिया। शुद्धोधन बड़े प्रसन्न हुये। "यह मेरे लड़के के लिये आनन्द का एक और विषय है। वह कभी भी अब सन्यास के बारे में नहीं सोचेगा।" यह सोचकर उन्होंने यह खुश खबरी पहुँचाने के लिए एक आदमी को तुरत बाग में भेजा।

सिद्धार्थ ने यह जानते ही कि उन्हें एक लड़का हुआ है कहा—"तो राहुल पैदा हो गया?" राहुल का अर्थ—प्रेम के योग्य, होता है।

तभी सिद्धार्थ ने सन्यास लेने का निश्चय कर लिया था। जीवन में आनेवाले रोग, वार्धक्य, मृत्यु से बचना है तो जीवन से ही मुक्ति पानी होगी—और इसके लिए सन्यास ही उनको एक मात्र साधन जंचा। फिर भी, अपने लड़के को स्वयं अपनी आँखों देख कर, खुश हो कर, फिर सन्यास लेने की उन्होंने ठानी।

सिद्धार्थ जब वापिस जा रहे थे तो किसागौतमी राजकुमारी ने अत्यन्त आनन्द में यह गाया।

निब्बुता नून सामाता, निब्बुता नून सोपिता।
निब्बुता नून सानारी, यस्ययन् ई दिसोपति।

(उसका मतलब था कि इस समय सिद्धार्थ को देखकर, उनके माता, पिता और पत्नी बहुत ही आनन्दित होंगे। निब्बृति के दो अर्थ हैं। एक सुख क्षेम (निवृति) और दूसरा अर्थ समाप्ति, तिरोगमन आदि (निवृत्ति)

किसागौतमी की बातों में सिद्धार्थ ने वैराग्य का अर्थ ही देखा। इसपर सन्तुष्ट हो कर अपने गले की रत्नमाला को उन्होंने उसे दे दिया। परन्तु उस लड़की ने सोचा कि सिद्धार्थ ने उससे प्रेम किया है, और उसे भी वह यशोधरा की तरह रानी बनायेंगे।

सिद्धार्थ घर आकर....अपने गद्दोंवाले बिस्तरे पर लेट गये। उनको हर्षित करने के लिए स्त्रियों ने उनके सामने नृत्य किया। गायन किया, वाद्य बजाये। परन्तु सिद्धार्थ इनमें किसी भी चीज़ से आकर्षित नहीं हुये। वे आँखें मून्दकर सो गये।

युवराजा को सोता देख, उसके चारों ओर बैठी स्त्रियाँ गाना, नाचना रोक कर अपने अपने वाद्यों पर सिर रखकर ऊँघने लगीं।

थोड़ी देर सोकर सिद्धार्थ जाग उठे। उन्होंने अपने चारों ओर देखा। सोने से पहिले जो स्त्रियाँ अप्सराओं की तरह लगती थीं, अब भिन्न भिन्न भंगिमाओं में सर्वथा अनाकर्षक लग रही थीं। नृत्य और गायन करते समय, उनमें जो सौन्दर्य दीख पड़ता था वह निद्रादेवी ने हर लिया था।

सिद्धार्थ को अपना निश्चय याद आ गया। वे झट से उठकर बैठ गये। हाँ,

इसी रात को, इन सब विनोद विलासों से विदा लेकर, सन्यास ग्रहण करना होगा। मुक्ति के कठिन मार्ग पर चलना होगा।

ये विचार जब उनके मन में उठ रहे थे, तब उनको कोई कान में यह कहता लगता था।"

"पगले, क्यों सन्यास लेते हो! सात दिन में, तुम सात हजार द्वीपों के सम्राट होने जा रहे हो। दसों दिशाओं में तेरा राज्य होगा। कितनी ही बड़ी सेना, तेरी आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़ी रहेगी। तेरे वैभव ऐश्वर्य का अन्त न होगा। इसलिये इन विचारों को छोड़ दे और निश्चिन्त होकर रह।"

इन बातों से बुद्ध की व्याकुलता शान्त न हुई। परन्तु और भी बढ़ गई। सात रोज बाद तो क्या, अगर तभी उसी क्षण उनको साम्राज्य मिलता, तो वे उसे छोड़ कर चले जाते।

सिद्धार्थ ने द्वार के पास जाकर पूछा—"सीढ़ियों के पास कौन है?" यह सुन, चेन्ना ने सामने आकर कहा—"मैं हूँ महाराज।"

"तुम ही हो, मेरे घोड़े को ज़ीन लगाकर तैयार करो।" सिद्धार्थ ने कहा।

चेन्ना ने कंटक नामक घोड़े को जाकर तैयार किया।

इस बीच, सिद्धार्थ अपने लड़के को देखने के लिए यशोधरा के कमरे में गये। कमरा खोलते ही उनको यशोधरा पलंग पर लेटी हुई दिखाई दी। उनके पलंग के चारों ओर फूल पड़े थे। यशोधरा गाढ़ निद्रा में थी। नींद में, उन्होंने, एक हाथ से अपने लड़के को छाती से लगा रखा था। लड़का भी सो रहा था।

सिद्धार्थ जान गये। यशोधरा का हाथ बिना उठाये, उन के लिए लड़के को उठाना सम्भव न था। हाथ हिला तो यशोधरा जरूर उठेगी और उठकर मुझ से बातचीत करेगी। उससे कुछ देर बातचीत करने के बाद, हो सकता है, मेरा सन्यास लेने का निश्चय कुछ शिथिल हो जाये। सिद्धार्थ दरवाजे की देहली पकड़ कर यह सोचते सोचते वहीं खड़े रहे।

"मैं, राहुल को फिर देखूँगा। मुक्ति का मार्ग खोजने मैं जा रहा हूँ—ऐसे समय पर, पुत्र वात्सल्य के कारण मुझे इस उत्तम उद्देश्य को नहीं बिगाड़ना चाहिये।" यह सोच सिद्धार्थ पीछे हटे। सीढ़ियाँ उतरकर उन्होंने देखा कि घर के सामने घोड़ा तैयार खड़ा था।

कंटक, साफ़, सफेद रंग का घोड़ा था। उसकी लम्बाई अट्ठारह फुट थी, ऊँचाई भी इसके अनुपात में थी। सिद्धार्थ, उसकी पीठ सहलाकर, उस पर चढ़ गये घोड़ा आगे जा रहा था, और चेन्ना उसकी पूँछ पकड़ कर पीछे चला आ रहा था। जब सिद्धार्थ, नगर का प्राकार पार करके बाहर गये तो आधी रात हो चुकी थी।

नगर के द्वार के किवाड़ बहुत भारी थे—कई के मिलकर हटाने से वे खुलते थे। यही नहीं, द्वार पर शुद्धोधन ने अनगिनत पहरेदार नियुक्त किये हुये थे। यह सब व्यवस्था इसीलिये ही की गई थी ताकि सिद्धार्थ नगर से भाग न निकलें। पर ठीक उसी समय वे सब सो रहे थे और द्वार खुले हुये थे।

नगर से थोड़ी दूर आने के बाद, सिद्धार्थ ने पीछे मुड़कर देखा। भरी चान्दनी में, कपिलवस्तु नगरी चमचमा रही थी। सिद्धार्थ, सबेरा होने से पहिले, तीन राज्यों को पार करके अनोमा नदी के पास गये। कंटक इस यात्रा में तेजी से भागता आया था। चेन्ना भी उसके साथ भागा आ रहा था।

सिद्धार्थ अनोमा नदी के उस पार गये। वहाँ सफेद रेत थी। वहाँ उन्होंने अपने सारे आभूषण निकालकर चेन्ना को देते हुये कहा—"इन्हे और घोड़े को लेकर वापिस चले जाओ।"

"मुझे वापिस क्यों भेज रहे हैं! मैं भी आपके साथ आऊँगा। आपके साथ मैं भी सन्यास लूँगा।" चेन्ना ने आग्रहपूर्वक कहा।
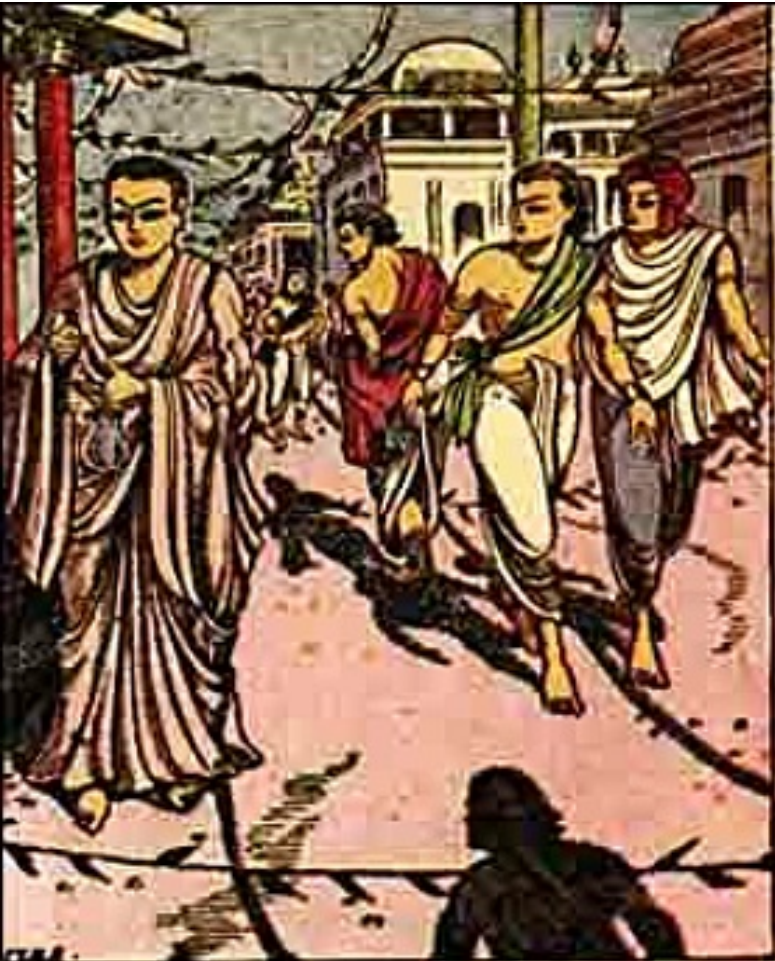
"अगर तुम मेरे साथ ही रहे तो महाराजा शुद्धोधन और यशोधरा देवी को मेरे बारे में कैसे पता लगेगा! इसलिये तुम कपिलवस्तु जाकर, मेरे सन्यास के बारे में, मेरे पिता, मेरी मौसी प्रजापती और मेरी पत्नी को कहो। सन्यास के लिए तो अवसर मैं ही तुम्हें बाद में दूंगा। सबसे कहना कि मेरे लिये कोई भी शोक न करे। कहना कि राहुल का सावधानी के साथ पालन पोषण हो। मैं पूर्ण बुद्ध होने पर उसको देखूंगा।" सिद्धार्थ ने कहा।

यह सुन चेन्ना को दुख हुआ। वह घोड़ा लेकर वापिस जाने लगा।

सन्यास ग्रहण करने वाले को मुंडन करवाना होता है। क्योंकि उनका मुंडन करने वाला कोई न था इसलिए उन्होंने अपने केश एक हाथ में पकड़ कर, तल्वार से काट दिये। उनके सिर पर दो अंगुल ऊंचे बाल रह गए। कहते हैं कि अन्त तक न वे बढ़े न घटे ही।

इसके बाद सिद्धार्थ ने काषाय वस्त्र पहिने, कमंडल लिया। जन संचलन होने से पहिले वे अनुप्रिय नाम की अमराई में चले गये। वे बाग में सात दिन निराहार व्रत करते रहे। अगले दिन वे राजगृह की ओर निकले। पूर्व द्वार से नगर में प्रवेश करके उन्होने घर घर भिक्षा माँगी।

उस समय राजगृह में आषाढदेशी नाम का उत्सव हुआ करता था। गलियों में लोग भरे हुए थे। घरों के सामने खड़े सिद्धार्थ को उन्होने बड़े आश्चर्य से देखा। उन्होने वैसा सन्यासी पहिले कभी कहीं न देखा था। राजगृह के राजा बिम्बसार के पास जाकर कुछ लोगों ने कहा—"महाराज, हमारे नगर में एक अजीब

व्यक्ति भीख माँग रहा है। वह या तो कोई देवता है, गन्धर्व है, गरुड़ है, नाग है कुछ भी हो वह मामूली आदमी कतई नहीं है।"

"अगर यह जानना चाहते हो कि वह वास्तव में कौन है, उसके साथ नगर से बाहर जाओ और मालूम करो। देवता होगा तो अदृश्य हो जाएगा, गरुड़ होगा तो उड़ जाएगा। नाग होगा तो भूमि में चला जाएगा। मामूली आदमी होगा तो माँगी हुई भिक्षा को लेकर कहीं बैठकर खायेगा" बिम्बसार महाराज ने उनसे कहा।

इस बीच सिद्धार्थ भिक्षा लेकर नगर के बाहर वाले पांडव पर्वत के पास जाकर एक पेड़ के नीचे बैठकर भोजन करने लगे। उन्होंने ऐसा भोजन कभी न किया था। जीवन भर मिष्टान्न ही खाये थे। ऐसे भोजन को छुआ तक न था। परन्तु तपस्या में इस तरह के कष्ट कितने ही सहने थे, इस विश्वास से उस भोजन को निगलते हुए उन्होने सोचा " सिद्धार्थ तुम्हारा शरीर कोई सोने का नहीं है। कितनी ही चीजों से मिलकर बना है। यह भोजन शरीर में जायेगा, पचेगा, शरीर इसमें से वही चीज़ लेगा जिसकी की उसको जरूरत है। यह भी एक आहार ही है।"

राजगृह के कुछ लोग सिद्धार्थ के पीछे गये। उनको भोजन करता देख राजा बिम्बसार को इस बारे में जाकर बताया।

महाराज बिम्बसार ने पाँडव पर्वत के पास आकर स्वयं सिद्धार्थ से पूछा— "आपका नाम क्या है? आपका कौन सा देश है? कहां के रहनेवाले हैं?"

सिद्धार्थ ने बताया। तुरत पता लगा कि वे बचपन के साथी थे।

"सिद्धार्थ! यह क्या! तुम्हारे वंश में कभी किसी ने यों भीख माँगकर खाया है! क्यों यह कर रहे हो! हमारे राज्य में अस्सी हजार गाँव हैं। अंग और मगध देशों का क्षेत्रफल पाँच हजार वर्ग मील है। मुझे प्रति वर्ष बहुत सा धन मिलता है। तुम्हें मैं अपना आधा राज्य दे देता हूँ। आराम से राज्य करो।" बिम्बसार ने कहा।

"मुझे राज्य नहीं चाहिए। मुझे चाहिए बुद्धत्व।" सिद्धार्थ ने कहा।

बिम्बसार ने उन्हें कई तरह से कहकर समझाया,—पर सिद्धार्थ न माने। आखिर बिम्बसार ने कहा—"मुझे यह वचन दो कि जब तुम बुद्ध हो जाओगे, तब तुम अपना पहिला उपदेश राजगृह में ही दोगे।" सिद्धार्थ से यह मनवाकर वह अपने घर गया।

सिद्धार्थ जब उस पर्वत से जा रहे थे तो उनको दो ध्यानस्थ योगी दिखाई दिये.... उनका नाम था अलार और उद्दक। पर उन्हें लगा कि सिर्फ ध्यान से बुद्धत्व नहीं पाया जा सकता था। बिना कठिन तपस्या के उद्देश्य प्राप्त न हो सकेगा, यह सोच वे ऊरुवेल वन गये।

इस वन के पास रेत के बड़े बड़े टीले थे। उनके कारण ही, उसे ऊरुवेल कहा जाता था। उस अरण्य में....अनादि काल से हजारों योगी रहा करते थे।

जब कभी उनके मन में कोई क्षुद्र विचार आता और तपस्या उस तरह भग्न होती तो वे नदी में स्नान करते और उस में से मुट्ठी भर रेत ले, अपना क्षुद्र विचार सब को बताकर उस रेत को एक जगह फेंक देते। इस तरह रेत फेंकने से ही वहां टीले बन गये थे। (अभी है)

चन्द्रमा की सैर

"वह रेलगाड़ी जो प्रति घंटा, पचास मील की रफ्तार से चल रही हो, अगर कहीं बिना रुके चलती गई, तो चन्द्रमा तक पहुँचने के लिए उसे करीब सात महीने लगेंगे।...." एक समय पुस्तकों में यह लिखा जाता था। परन्तु यह केवल अनुमान ही था। भूमि और चन्द्रमा के बीच रेल की पटरी नहीं है, रेल गाड़ियाँ नहीं चलती हैं। यही नहीं—, जो गाड़ी पचास मील की रफ्तार से चलती हो, वह कभी पृथ्वी को नहीं छोड़ सकती। बन्दूक की गोली कई सौ मील रफ्तार से जाती है, पर कहीं न कहीं वह भूमि पर गिरती ही हैं।

क्यों!

भूमि में गुरुत्वाकर्षण है। वह हर वस्तु को अपनी ओर खींचती है। अगर इसके आकर्षण परिधि से किसी चीज को बाहर जाना है—तो उसको हर सेकन्ड पांच मील जाना होगा, यानि, घंटे में अठारह हजार मील जाना होगा।

भूमि की आकर्षण परिधि से बाहर जाने के लिए यह न्यूनतम गति ही है। इतनी ही कि भूमि इसे अपनी ओर न खींच सकेगी, मगर वह आकाश में उसको अपने चारों ओर घूमायेगी।

रूस और अमेरिका द्वारा भेजे गये, "स्पुटनिक" इसी तरह पृथ्वी की

भूमि की परिक्रमा करनेवाला स्पुटनिक—कृत्रिम उपग्रह

परिक्रमा करते रहे। अगर उनके रास्तों में हवा हो, तो उसके वेग से स्पुटनिक का वेग कम होगा, और तब भूमि उसको अपनी ओर आकर्षित कर सकती है। इस प्रकार कई स्फुटनिक गिरे भी।

भूमि से भरे, सैकड़ों मीलों की वायु की परत को पार करके यदि कोई स्फुटनिक गया, तो वह हमेशा भूमि के चारों ओर घूमता रहेगा। चन्द्रमा, करोड़ों वर्षों से भूमि की परिक्रमा कर रहा है। जाने कितने करोड़ वर्ष और घूमे।

आजकल अठारह हज़ार मील, फी घंटे जानेवाले, केवल रोकेट ही हैं। जिस प्रकार आतिशबाजियाँ आकाश में जाती हैं, उसी प्रकार ये रोकेट भी जाते हैं। परन्तु उसमें बारूद के सिवाय, कई तेज अम्लों का भी इस्तेमाल किया जाता है।

इस तरह के रोकेट में, अठारह हज़ार मील के रफ्तार से जाने पर भी, हम चन्द्रमा के पास न पहुँच सकेंगे। क्योंकि वह रोकेट भूमि की परिक्रमा ही करेगा। वह भूमि की आकर्षण परिधि से बाहर न जा सकेगा।

इस आकर्षण परिधि को पार करके जाने के लिए यह अवश्यक है कि रोकेट की गति प्रति सेकन्ड सात मील हो, या फी घंटा, २५ हज़ार मील हो। पिछली जनवरी को रूस ने जो रोकेट छोड़ा था, उसकी यही गति थी।

परन्तु इस गति का रोकेट सीधे चन्द्रमा तक न पहुँचेगा। अगर यह

चन्द्रमा को पारकर सूर्य की प्रदक्षिणा करने के लिए जानेवाला कृत्रिम ग्रह

इस गति से चन्द्रमा से जा टकराया तो वह टुकड़े टुकड़े हो जायेगा। अगर उसमें कोई प्राणी हुए तो वे जिन्दे न रह सकेंगे।

यदि वह चन्द्रमा तक न पहुँचकर, कहीं और गया तो चन्द्रमा उसको आकर्षित नहीं कर सकता। क्योंकि भूमि की गुरुत्वाकर्षण शक्ति में, छठवाँ हिस्सा ही चन्द्रमा में है।

सच कहा जाय तो चन्द्रमा में कोई प्राणी नहीं हैं। और अगर कोई हों तो उनका भूमि तक आना अधिक आसान है, बजाय हमारे चन्द्रमा तक जाने के। क्योंकि कोई चीज़ जो सेकन्ड में, डेढ़ मील की गति से चलेगी, वह चन्द्रमा के आकर्षण परिधि से आसानी से बाहर जा सकती है।

यही कारण है कि वह रोकेट जो भूमि के आकर्षण क्षेत्र से पार गया, चन्द्रमा को भी पार करके, आकाश में बहुत दूर चला गया और सूर्य की आकर्षण परिधि में आकर, ग्रह की तरह सूर्य की परिक्रमा करने लगेगा। अभी जो रुस ने रोकेट छोड़ा है, वह इसी तरह सूर्य की प्रदक्षिणा कर रहा है।

अब चन्द्रमा तक सैर करने के लिए एक ही चीज़ बाकी रह गई है, वह है रोकेट में आदमी को रखकर, सुरक्षित आकाश में भेजना। इस तरह का रोकेट २५ हज़ार मील की रफ्तार से चलकर, भूमि की आकर्षण परिधि से बाहर चला जायेगा। तब रोकेट में बैठा आदमी समयानुकूल उसकी गति कम करके, उसको चन्द्रमा की आकर्षण परिधि में लायेगा, और चन्द्रमा पर उतर सकेगा।
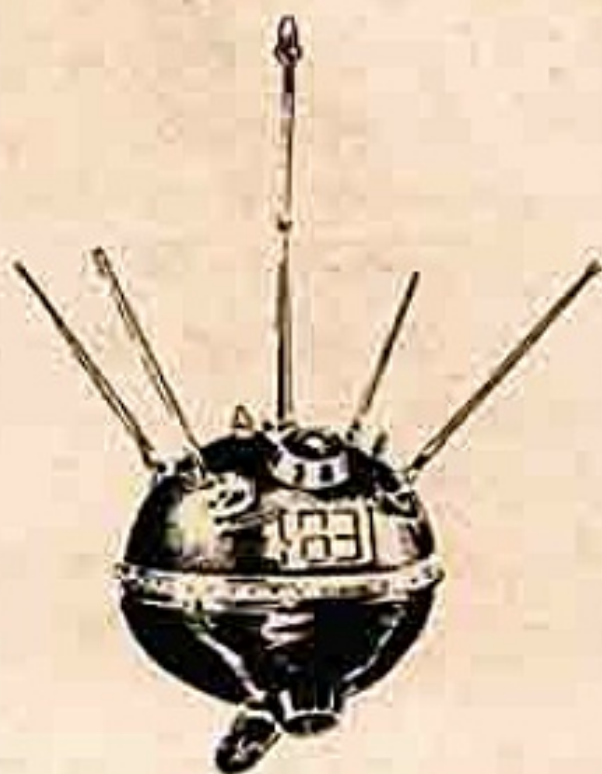
पर क्या इतने से चन्द्रमा की सैर की समस्या हल हो जायेगी? नहीं! इस सम्बध में क्या क्या बाधायें हैं, हम उनके बारे में अगले महीने सोचेंगे।

कृत्रिम उपग्रह में यंत्रों का गोल

प्रकृति के आश्चर्य

[९]

मुझे ऐसा लगा कि कुयेबाबा में एक और सुगुण है। मेरा उसके प्रति गौरव और बढ़ गया।

उसने अपने शस्त्र ले लिए और हमने चलना शुरु किया। हम घंटा भर चलते रहे। प्रातःकालीन प्रकाश में जंगल बहुत सुन्दर दीख पड़ता था।

हमें एक कछुआ जाता दिखाई दिया। मैंने उसे पकड़ने की कोशिश की, पर उसका ऊपर का भाग इतना चिकना था कि मैं उसे पकड़ न सका। फिर उसके बड़े बड़े नाखून भी थे। कुयेबाबा मेरी हालत देखकर ठहाका मारकर हँसा। वह छूटकर भागने ही वाला था कि उसने एक छलाँग में उसे उलट दिया, फिर उसे पकड़ लिया।

"यह आज के लिए हमारा नाश्ता है।" उसने कहा।

जबतक कछुआ आग में भुनता रहा तबतक वह चारों तरफ़ देखता रहा। उसने ऊँची टहनियों की ओर देखकर पूछा—"क्यों, न्यिकूचाप शहद पसन्द है?"

"पसन्द तो है, पर अब कहाँ से मिलेगा?" मैंने कहा।

"अनानास को शहद से मिलाकर खाया जाये तो बहुत स्वादिष्ट होता है। हमें अनानास तो मिल ही रहे हैं।" उसने कहा—"तुम कछुए को भूनते रहो। मैं जाकर शहद लाता हूँ। उस ऊँचे पेड़ पर छत्ता दिखाई दे रहा है न!

उसने मुझे दिखाया तो पर मैं छत्ता न देख सका। उसने एक बाँस काटा। फिर

तिबोर सेकल्य

उसने उसको दो गाँठों के नीचे काटा। इस तरह एक ऐसी चीज़ बन गई जिसका पेन्दा भी था। उसमें चौबीस औन्स शहद आ सकता था। परन्तु वह उसके लिए काफ़ी न था। उसने एक और ऐसी चीज़ तैयार की।

फिर उसने पेड़ की छाल निकाली। उससे उसने दोनों बासों के टुकड़ों को बाँध दिया और कन्धे के आगे पीछे लटका लिया। फिर उसने उस छाल से बहुत सी लम्बी लम्बी रस्सियाँ तैयार कीं।

वह पेड़, जिसके पास वह जाना चाहता था, नाले के पार था। वह वहाँ तक जाकर, नाले में उतरता उतरता रुका। उसकी तह में काँटे थे। इसलिए किनारे पर पड़े एक ठूंठ को उसने उठा कर देखा कि वह उसका भार सह सकेगा कि नहीं। उसकी मदद से वह झट नदी पार कर गया।

वह पेड़ बहुत मोटा था। उसका तना चिकना था। इसलिए वह पैरों में रस्सी का फन्दा फँसाकर चढ़ने लगा। इस तरह दस गज़ चढ़ने के बाद, उसने पैरों से फन्दा निकाल दिया और कमरे में बाँध लिया।
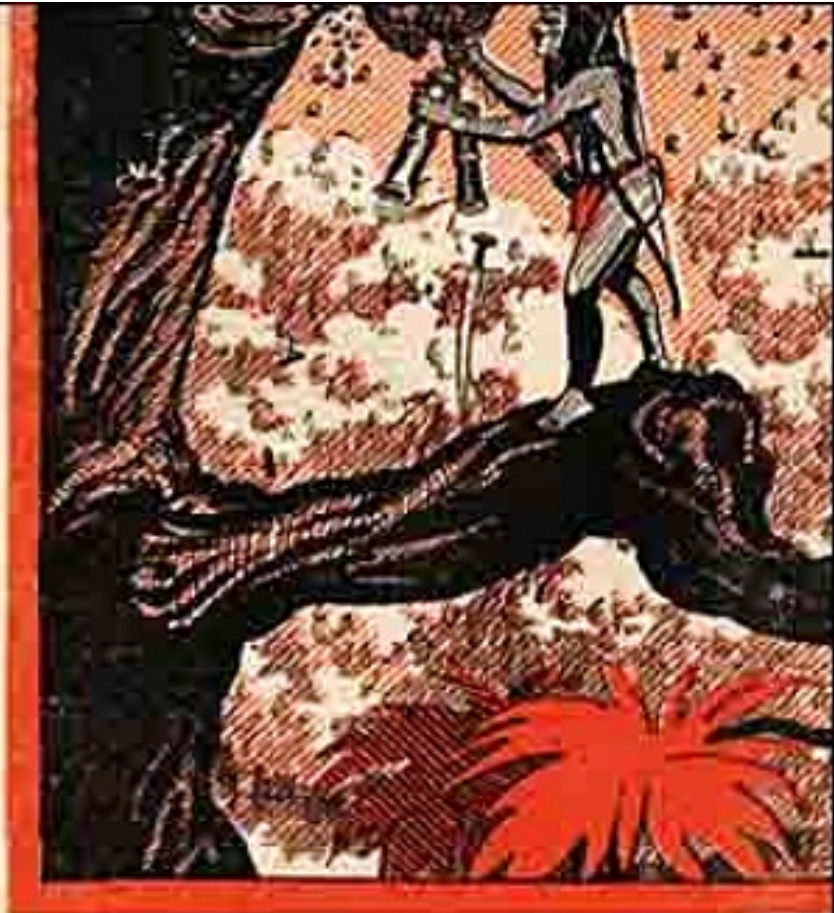
फिर वह छत्ता काटने लगा। उसके चारों ओर मधु मक्खियाँ उड़ने लगीं। परन्तु जंगली मधु मक्खियाँ, मामूली मधु मक्खियों की तरह नहीं काटतीं, नहीं तो वे उसे काट काटकर मार देतीं।

मैंने देखा कि वह छत्ते में से शहद को उन खोखले बाँस के टुकड़ों में डाल रहा था। उसने इस तरह कई बार किया। वह बीच बीच में अपना हाथ भी चाटता जाता था—"शहद बहुत अच्छा है, इतना अच्छा शहद संसार में शायद कहीं न होगा।"

दोनों बाँसों के टुकड़ों के भर जाने के बाद, फिर उस ठूंठ की मदद से, नदी पार करके मेरे पास आया। हम दोनों ने वह शहद पिया। वह मीठा तो था ही, कुछ कुछ खट्टा भी था, बहुत ही स्वादिष्ट। कुछ शहद खाने के बाद, उसने उन दोनों बाँस के टुकड़ों के मुख को पत्तों से बाँध दिया।

हम जब कछुआ खा रहे थे, तब उसने कहा—"जब मैंने पेड़ पर से देखा था तो अनानास पास ही दिखाई दिये।" हम दस मिनट में उसके बताये हुए स्थल पर आये। वहाँ हमें चार पाँच फीट ऊँची काँटों की झाड़ियाँ दिखाई दीं।

"ये ही अनानास हैं।" उसने कहा। परन्तु मुझे कहीं फल न दिखाई दिये। वह झाड़ियों के पास जाकर—एक को काटकर, उसने अनानास उठाकर मेरी ओर फेंका। वह सन्तरे का रंग का था, और तरबूज़ जितना बड़ा। मैंने पहिली बार अनानास देखा था। परन्तु उस पर भी काँटे देखकर मुझे थोड़ी निराशा हुई। वह एक एक पौधे के पास जाता, काँटों की बिना परवाह किये, वह उन्हें काटने लगा। मेरे पैरों में जूते थे। फिर भी मुझे काँटों से डर लगा। मैं शर्मिन्दा था। मैं भी अनानास काटने लगा। पहिले तो कुछ काँटे चुभे फिर उनसे बचने का भी मैं उपाय जान गया।

अनानास का ढेर-सा लग गया। गिनने पर ये पैन्तीस निकले। हमने सोचा कि हम उन्हें कैसे ले जायेंगे। इस बीच कुयेबाबा ने एक फल को काटकर उसके टुकड़े टुकड़े करके उस पर शहद लगाया। जैसे कि उसने कहा था, अनानास शहद के साथ खाने पर बहुत अच्छा लगा।

उसने दो टहनियाँ काटीं। एक एक सिरे पर आठ आठ अनानास बाँधे। बेहँगी-सी बनाली। हम दोनों बेहँगियों को लेकर पसीना बहाते, हाँफता हाँफते अपने साथियों के पास पहुँचे। चार आदमी पानी में घुसकर, जहाज़ में लगे छेद की मरम्मत कर रहे थे। छेद भर दिया गया था।

भोजन के बाद यात्रियों ने एक एक अनानास लिया। आधा खाकर, उन्होंने आधा, यात्रा के लिए रख लिया। अनानास को शहद के साथ खाते खाते लोग खुशी से चिल्लाये।

क्योंकि मरम्मत पूरी हो गई थी इसलिए किनारे पर से जहाज़ को फिर पानी में धकेल दिया गया। आधे तो जहाज़ को धकेल रहे थे और आधे यह देख रहे थे कि जहाज़ एक तरफ़ न झुक जाय। जहाज़ ने गहरे पानी में जाकर लंगर डाल दिया। नाविकों ने यात्रियों की सहायता से जहाज़ को धोया। फिर सामान जहाज़ पर चढ़ाया गया।

कुयेबाबा के लिए जिसने चन्दा इकठ्ठा किया था उस व्यक्ति ने उससे कहा—
"भाई, जो तुमने सहायता की है, हम

उसके लिए बहुत कृतज्ञ हैं। यह तुम्हारे लिए इकट्ठा किया गया धन है। ले लो।"

"मुझे धन की जरूरत नहीं है। जो कुछ मुझे चाहिये वह सब जंगल में है। जो यहाँ नहीं है, उसकी मुझे जरूरत नहीं है।" कुयेबाबा ने कहा।

मैं उसके साथ तमेड़ में बैठा था। उसने मेरा हाथ जोर से दबाया।

"कुयेबाबा, क्या तुमने कभी जहाज़ पर सफ़र किया है?" मैंने उससे पूछा। उसने कहा "नहीं।"

"तो मेरे साथ आओ, जहाज़ देख लो।" जहाज़ का कप्तान इसके लिए मान गया। वह जहाज़ देखकर जब उतर रहा था तो मैंने उसे अपना टोप देते हुए कहा—"यह रखो, मेरी निशानी के लिए।"

उसके ओठ हिले जैसे कुछ कहने जा रहे हो। परन्तु मुख से कोई बात न निकली। उसने एक बाण निकाला। अस्त होते सूर्य की ओर पानी में बाण छोड़ा। वह दूर पानी में गिरा। उसने तुरन्त अपने सिर के पीछे लगे पंख मुझे देकर कहा—"इस जरा पकड़ो, मैं डूबने से पहिले बाण ले आऊँगा।" उसके बाद वह अपनी नाव को चप्पू चलाता उस तरफ़ ले गया।

जबतक उसकी नाव आखों से ओझल न हो गई, मैं खड़ा खड़ा देखता रहा।

यह पंख अब भी मेरे पास है। जब मैं कठिनाइयों के समय, उसे निकालकर देखता हूँ, तो मुझे वे सब घटनायें याद आ जाती हैं और मैं इस तरह अपने को ढाढ़स बंधा लेता हूँ। (समाप्त)

चटपटी बातें

बाबा : (पोते से) क्यों नहीं कोई छोटी मोटी नौकरी कर लेते ? तुम्हारी उम्र में मैंने २५ रुपये महावार नौकरी, एक दुकान में करनी शुरु की, और पाँच साल में उस दुकान का मालिक हो गया।

पोता : आजकल वैसा गोलमाल नहीं हो सकता। प्रति दुकान में हिसाब की बहियाँ होती हैं।

*　　　　*　　　　*

पिता : (मास्टर से) माना हमारा लड़का शरारत करता है। मगर आपने उसे पीटा तो वह ओर भी बिगड़ जायेगा। इसलिए यदि वह कोई शरारत करे तो, पासवाले लड़के को पीटिये, ताकि उसको पिटता देख, उसे अक्ल आ जाये।

*　　　　*　　　　*

दामाद : (ससुर से) आपकी लड़की का व्यवहार बिल्कुल ठीक नहीं है। मैं गरीब ही सही। भले ही उसको आपकी सारी सम्पत्ति मिले पर इसीलिए क्या वह पाँच दस के सामने मेरा परिहास कर सकती है।

ससुर : सच है। मैं अपनी सम्पत्ति में उसे एक दमड़ी न दूँगा। अक्ल ठिकाने आ जायेगी।

दामाद : जल्दी न कीजिये। समझा-बुझाकर देखिये।

*　　　　*　　　　*

किसी कम्पनी में काम करनेवाले खजान्ची ने बहुत-सा रुपया गबन किया और पकड़ा गया। क्योंकि उसने बहुत दिन नौकरी की थी, इसलिए मालिक ने केवल काम से ही निकाला और कुछ न किया। नये खजान्ची के लिए विज्ञापन दिया गया। पुराने खजान्ची ने ही इसके लिए दरख्वास्त भेजी।

"क्या फिर तुझे रखना होगा?" मालिक ने पूछा।

"कुछ तो सोचिये। जो कुछ मुझे करना था, कर लिया है। रेडियो खरीद लिया है। कार खरीद ली है। मुझे रखने में अच्छा है, या किसी नये आदमी को, आप ही सोच लीजिये।" पुराने खजान्ची ने कहा।

*　　　　*　　　　*

"एक और तो यह कहते हो कि बिल्कुल अनुभव नहीं है और इतनी तनख्वाह माँग रहे हो।"

"आप ही सोचिये, अनुभव न हो तो काम और भी कठिन होता है न?"

विदूषक बुहाल

खलीफ़ा हसन अल रशीद की नौकरी में एक विदूषक हुआ करता था। उसका नाम था बुहाल। वह केवल विदूषक ही न था, ज्ञानी भी था।

एक दिन खलीफ़ा ने विदूषक से पूछा—"बुहाल, क्या तुम जानते हो, हमारे बगदाद शहर में कितने मूर्ख हैं?"

विदूषक ने कहा—"जी, मैं जानता हूँ।"

"अगर जानते हो तो उन सब की एक सूची तैयार करो। एक गलती भी न हो, समझे?" खलीफ़ा ने कहा।

विदूषक ने हँसकर कहा—"अधिक आसान तो बगदाद के ज्ञानियों की सूची बनाना है। मैं उनकी सूची बनाऊँगा। जो उनमें न हों, वे सब मूर्ख हैं।"

बुहाल, जब खलीफ़ा न था, उसके सिंहासन पर बैठ गया। उसकी इतनी हिमाकत देख, दरबारियों ने उसको लाठियों से खूब पिटवाया।

जब खलीफ़ा आया तो विदूषक रो रहा था। खलीफ़ा ने सारी घटना के बारे में मालूम करके उसको आश्वासन देना चाहा।

"हुज़ूर, गलती कर रहे हैं। मैं अपने घावों के बारे में नहीं रो रहा हूँ। थोड़ी देर ही इस सिंहासन पर बैठने से मुझे इतनी मार पड़ी, आप तो सालों से बैठे हैं, न मालूम उस दुनिया में आपको कितनी मार पड़ेगी, इसकी कल्पना करके ही मैं दुखी हो रहा हूँ।" विदूषक ने कहा।

बुहाल को शादी पसन्द न थी। यह जानकर खलीफ़ा को गुस्सा आया। उसने अपनी दासियों में से एक को चुनकर, उसकी उससे जबर्दस्ती शादी कर दी। जब रात को उसकी स्त्री, उसके पलंग पर

रमा देवी

बगल में आकर बैठी तो वह "हाय हाय" करता, चिल्लाता राजमहल में इधर-उधर भागने लगा।

खलीफ़ा ने उसको बुलवाकर पूछा—"अरे दुष्ट, तुम्हें सुन्दर स्त्री खोजकर दी और तुम उसे छोड़कर हाय-हाय करते, भाग रहे हो!"

विदूषक ने कहा—"हुज़ूर माफ़ करो। मेरी पत्नी सुन्दर है, इसमें कोई शक नहीं है। पर जब वह मेरे पास आकर बैठी तो उसके दिल से मुझे ये आवाज़ें सुनाई दीं—"मुझे अच्छे कपड़े चाहिए, मुझे अच्छे गहने चाहिए।" ये बातें सुनकर, डरकर मैं भाग आया।"

बुहाल ने ये बातें खलीफ़ा से धन ऐंठने के लिए न कही थी, क्योंकि खलीफ़ा ने अपने विदूषक को एक बार हज़ार सोने की दीनारें दी थीं। पर विदूषक ने उसे लेने से इनकार कर दिया। फिर थोड़े दिनों बाद, खलीफ़ा ने उसे एक हज़ार और दीनारें देनी चाहीं, विदूषक ने तब भी लेने से इनकार कर दिया।

"मैं खुश होकर तुम्हें ईनाम देना चाहता हूँ, और तुम लेने से इनकार

कर रहे हो। क्या बात है!" खलीफ़ा ने पूछा।

इस प्रश्न के उत्तर में विदूषक ने अपना पैर खलीफ़ा के मुँह के सामने रखा। यह गुस्ताखी देख, खलीफ़ा के नौकरों ने विदूषक को खूब पीटा। परन्तु खलीफ़ा ने उनको रोकते हुए कहा—"क्यों ऐसी गुस्ताखी करते हो!"

"हुज़ूर गौर करें। अगर मैंने हाथ पसारकर आपके दिये हुये उपहार लिये हुये होते तो आज मैं आपके सामने यों पैर न रख पाता।" विदूषक ने कहा।

एक बार युद्ध से खलीफ़ा वापिस आ रहा था। खलीफ़ा के साथ बुहाल भी था। एक पड़ाव पर, आधी रात के समय खलीफ़ा को बहुत प्यास लगी। उसको उठकर, "पानी पानी" चिल्लाता देख, विदूषक एक लोटे में पानी ले आया।

"पानी पीने से पहिले, हुज़ूर एक सवाल का जवाब दें। अगर यह पानी न मिला होता, तो हुज़ूर इसके लिए क्या देते?" विदूषक ने पूछा।

"आधा राज दे देता" कहते हुये खलीफ़ा ने पानी पिया।

"अगर यह पिया हुआ पानी मूत्र के रूप में बाहर न आया और अन्दर ही रह गया, तो उसको बाहर लाने के लिए क्या देंगे?" विदूषक ने पूछा।

"जरूरत हुई तो आधा राज्य दे दूँगा।" खलीफ़ा ने कहा।

"इतने से पानी के लिए इतने-सी मूत्र की कीमतवाले राज्य के लिए हुज़ूर आप क्यों युद्ध करते हैं?" बुहाल ने पूछा।

खलीफ़ा ने शर्मिन्दा हो सिर नीचे झुका लिया।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जून १९५९ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, अप्रैल ’५९ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

अप्रैल – प्रतियोगिता – फल

अप्रैल के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : चलो चलें

दूसरा फ़ोटो : उदास क्यों हो ?

प्रेषक : चमनलाल गुप्ता

मन्डी, खजानीखाँ मकान नं. १३२८/५ लुधियाना (पंजाब)

सचित्र समाचार

यह गेन्द, जिसका चित्र नीचे दिया गया है, हाथी के दान्त से बनी है। इसका व्यास साढ़े चार अंगुल है। इसके बनानेवाला का नाम भगत भीमसेन है। ये दिल्ली के रहनेवाले हैं।

इस गेन्द की विशेषता यह है कि इसके अन्दर छब्बीस गेन्दें हैं।

कुछ समय पहिले एक चीनी शिल्पी ने छः अंगुल के व्यास की दान्त की गेन्द बनाई। उसमें २४ ही छोटी गेन्दें थीं। परन्तु भीमसेन ने १९५५ में एक ऐसी गेन्द बनाई, जिसमें २५ गेन्दे थीं। उसका व्यास भी साढ़े चार अंगुल था। अब उन्होंने २६ गेन्दोंवाली गेन्द बनाई है।

ये शिल्पी २२ वर्ष से दिल्ली में हाथी के दान्त पर काम करनेवालों को शिक्षा दे रहे हैं।

अनाथ स्त्रियों की सहायता के लिए आज कल कई संस्थायें काम कर रही हैं। उन संस्थाओं के अतिरिक्त, जो सरकार चला रही है, कई अन्य संस्थायें भी इस कार्य में संलग्न हैं।

(ऊपर) निकोबार द्वीप के निवासियों की सब चीज़ें जंगलों से, और लकड़ी से मिल जाती हैं। इन चीज़ों से बनाई गई वस्तुयें देश में प्रसिद्ध हो रही हैं। (नीचे) कुल्लू पर्वतीय प्रान्त में ग्राम पंचायत की एक बैठक।

चित्र - कथा

एक रोज दास और वास बाग में फल तोड़ने के लिए गये। परन्तु अमरूद के पेड़ पर वे फल न थे, जो उन्होंने पिछले दिन देखे थे। "टाइगर" जब भौंकता भौंकता वहाँ गया, तो उन्होंनें एक जगह एक लड़के को देखा। उसने कहा कि उसने अमरूद न तोड़े थे।—मगर उसने एक तरफ एक साँप को दिखाया। "टाइगर" ने एक छलांग में साँप का सिर पकड़ लिया। वह रबर का बना साँप था। चोर लड़का भागा, पेड़ों के पीछे जो अमरूद उसने छुपाये थे, वे, दास और वास के हाथ लगे।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works,

Photo by Madangopal

पुरस्कृत परिचयोक्ति

उदास क्यों हो ?

प्रेषक : श्री चमनलाल गुप्ता, लुधियाना

CHANDAMAMA (Hindi) APRIL 1959 Regd. No. M. 5452

बुद्ध चरित्र